झारखण्ड के सुदूर गाँवों में जनसंघर्ष और सैन्य दमन

आतंक के साये में आम झारखण्डी

राज्य द्वारा माओवादी आन्दोलन के दमन के लिए चुने कुछ प्रमुख क्षेत्रों में
जन जीवन की सुरक्षा पर सीडीआरओ की जाँच पर आधारित रिपोर्ट

कॉरडिनेशन ऑफ़ डैमोक्रैटिक राइट्स ऑरगेनाइज़ेशनस (सीडीआरओ) 2012

भूमिका

बिहार से अलग होकर झारखण्ड को राज्य बने एक दशक से ज़्यादा बीत चुका है। इस दौरान राज्य ने विस्थापन-विरोधी जनसंघर्ष और राजकीय सैन्य दमन की एक नयी सूरत देखी है। एक ओर जल, जंगल, ज़मीन के अधिकार को लेकर तेज होते अनेक जनसंघर्ष, तो दूसरी ओर 'ऑपरेशन ग्रीन हंट' के नाम से केन्द्र एवं राज्य सरकार द्वारा संयुक्त रूप से संचालित राजकीय दमन की ज़ोरदार मुहीम की खबरें लगातार आती रही हैं।

झारखण्ड के गाँवों में सैन्य अभियान और सरकारी सशस्त्र बलों द्वारा गाँव वालों को प्रताड़ित किए जाने की जो खबरें बड़े महानगरों तक छन-छन कर आती रही हैं उनकी तह में जाने की ज़रूरत लंबे समय से महसूस हो रही थी। ये खबरें झारखण्ड की मानवाधिकार संस्थाओं की रिपोर्टों में ही नहीं, स्थानीय अखबारों में भी छपती रही हैं।

ऐसी स्थिति ने समाज के लोकतांत्रिक दायरों में स्वाभाविक तौर से इन चिंताओं को जन्म दिया है कि कहीं कॉरपोरेट के चलते खनिज संपदाओं से सर्वाधिक समृद्ध इस राज्य के गाँवों से लोगों को विस्थापित तो नहीं किया जा रहा है? क्या यहाँ के युवा अब अपनी आजीविका और सुरक्षा की खातिर अन्य राज्यों की ओर पलायन करने को मजबूर तो नहीं कर दिये जा रहे हैं? छत्तीसगढ़ के सलवा जुडूम की तर्ज़ पर क्या यहाँ भी माओवादियों से निपटने के नाम पर गाँव वालों को प्रताड़ित तो नहीं किया जा रहा है?

इन्हीं सवालों के ज़वाब ढूंढने के लिए कॉर्डिनेशन ऑफ डैमोक्रैटिक राइट्स ऑरगेनाइजेशन (सीडीआरओ) ने इन इलाकों का दौरा करने का निर्णय किया। हमारी जाँच दो चरणों में हुई। पहला दौरा 26 से 30 मार्च 2012 के बीच हुआ और दूसरा 19 से 23 मई के बीच। अपने इन दौरों का उद्देश्य था झारखण्ड के जन जीवन की सुरक्षा संबंधित हालातों की जाँच पड़ताल करके उनके बारे में देश को वाकिफ कराना।

सीडीआरओ के पहले जाँच दल में निम्न संगठनों के व्यक्ति शामिल रहे :

शशि भूषण पाठक, अलोका कुजूर एवं लिक्स रोज (पी.यू.सी.एल., झारखण्ड); अफज़ल अनीस (यूनाइटेड मिल्ली फोरम, झारखण्ड); इप्सिता पति (संवाददाता, 'द हिन्दू', रांची); शाहनवाज़ आलम एवं राजीव यादव (पी. यू.सी.एल., उत्तर प्रदेश); गौतम नवलखा एवं मेघा बहल (पी.यू.डी.आर., दिल्ली); नरसिम्हा रेड्डी (ओ.पी.डी.आर. , आन्ध्र प्रदेश); अमर नंद्याला (ह्यूमन राइट्स फोरम, आन्ध्र प्रदेश); मनिश्वर (कमेटी फॉर पीस एंड डेमोक्रेसी, मणिपुर, दिल्ली) और वर्धा, महाराष्ट्र से चन्द्रिका एवं उत्तराखंड से प्रशान्त राही (दोनों स्वतंत्र पत्रकार)। विभिन्न स्थानों पर मुख्यतः पी.यू.सी.एल. के स्थानीय मानवाधिकार कार्यकर्त्ता और विभिन्न समाचार पत्रों एवं न्यूज़ चैनलों के संवाददाता इस दौरे में शामिल होते रहे। उनके प्रति पूरा सम्मान और आभार प्रकट करते हुए हमें यह खेद है कि उनकी अधिक संख्या और स्थानाभाव के चलते सबके नाम दर्ज करना फिलहाल संभव नहीं हो पा रहा है।

जाँच के दूसरे, अर्थात सारंडा-पोडैयाहाट क्षेत्र में जाने वाले दल में शशि भूषण पाठक, आलोका कुजूर, मिथिलेश कुमार एवं संतोष यादव (पी.यू.सी.एल., झारखण्ड); नौशाद (ब्यूरो चीफ, चत्रा, 'दैनिक भास्कर'); पुनीत मिंज (झारखण्ड माइनिंग एक्शन कमेटी - जेमैक); चिलुका चंद्रशेखर, नारायण राव एवं आर. राजनन्दम (ए.पी.सी.एल.सी. , आन्ध्र प्रदेश). प्रीतिपाल सिंह एवं नरभिंदर सिंह (ए.एफ.डी.आर., पंजाब); शाहनवाज़ आलम एवं राजीव यादव (पी. यू.सी.एल., उत्तर प्रदेश), गौतम नवलखा, मेघा बहल एवं श्रुति जैन (पी.यू.डी.आर. दिल्ली) और वर्धा, महाराष्ट्र से चन्द्रिका एवं उत्तराखण्ड से प्रशान्त राही (दोनों स्वतंत्र पत्रकार) शामिल थे। इस चरण में कुछ-एक सामाजिक कार्यकर्त्ताओं की ओर से न्यूनतम स्थानीय मार्गदर्शन प्राप्त हुआ।

संदर्भ

ग्रामीणों के लिए विकास का अर्थ होता है बेहतर स्वास्थ्य, शिक्षा और खेती के साधन, तो दूसरी ओर खनिज बहुल क्षेत्रों में राज्य के लिए विकास का अर्थ है खनन। ज़्यादातर खनिज-बहुल क्षेत्र आदिवासी-बहुल भी हैं। भारत के 50 खनिज-बहुल प्रदेशों में से आधे से ज़्यादा में आदिवासी बसते हैं, और करीब 28% क्षेत्र जंगल है। 1951 से 1991 के बीच 26 लाख से भी ज़्यादा लोग खनन से विस्थापित हुए हैं, जिनमें आधे से ज़्यादा आदिवासी हैं। 40% खनिज-बहुल प्रदेश माओवादी आन्दोलन से प्रभावित हैं (रिच लैंड्स, पूअर पीपल: इज़ 'ससटेनेबल' माइनिंग पोसिबल?, रिपोर्ट, सेंटर फॉर साइंस एंड एनवायरमेंट)।

खनिजों के मामलों में झारखण्ड बहुत धनी है। यहाँ देश का 28% लोह अयस्क (सबसे ज़्यादा), 29% कोयला (तीसरे नंबर पर), 16% तांबा (पहले नंबर पर), 10% चांदी अयस्क, माइका (पहले नंबर पर), बॉक्साइट (तीसरे नंबर पर), मैंगनीज़, लाइमस्टोन, यूरेनियम आदि उपलब्ध हैं। देश में खनन के क्षेत्र में छठे नंबर पर आने वाले इस राज्य में 2009-10 में 12,036.78 करोड़ रुपये के मूल्य का खनिज उत्पादन हुआ (वेबसाइट, मिनिस्ट्री ऑफ माइंस)। झारखण्ड को अलग राज्य बनाने के लिए संघर्ष के पीछे एक कल्पना यह भी थी कि एक ऐसा राज्य स्थापित हो, जहाँ वन एवं खनिज संसाधनों पर आदिवासियों का मालिकाना हक और प्रभुत्व होगा। मगर इसके ठीक उलट, विकास के नाम पर अंधाधुंध औद्योगीकरण और खनन के कारण आदिवासियों के विस्थापन और राज्य से बाहर पलायन ने उनके अस्तित्व को ही खतरे में डाल दिया है। जहाँ इस प्रदेश में 1901 में आदिवासियों का प्रतिशत 50 था, वहीं 2001 की जनगणना के अनुसार आदिवासी घटकर 26 प्रतिशत हो चुके हैं। गैर-आदिवासियों के बाहर से आगमन और आदिवासियों के पलायन के चलते आदिवासियों के अस्तित्व और अस्मिता के लिए खतरा उत्पन्न हो गया है।

1985-2004 के बीच 9,000 हेक्टेयर जंगल की ज़मीन खनन के लिए दी जा चुकी है। राज्य ने उसके बाद भी विभिन्न फैक्ट्रियों, पॉवर प्लांट और खनन के लिए 100 से भी अधिक एम.ओ.यू. पर हस्ताक्षर किये हैं, जिनके लिए 2,00,000 एकड़ ज़मीन की ज़रूरत होगी, जिससे दस लाख लोगों के विस्थापित होने की संभावना है (वेबसाइट, झारखण्ड मिरर)।

अगर कोयले को छोड़ दें तो झारखण्ड का पश्चिम सिंहभूम जिला सबसे ज़्यादा खनन वाला इलाका है। राज्य में कंपनियों को जो ज़मीन पट्टे (लीज) पर दी गई है, उनमें से 28% इसी इलाके में हैं। राज्य की 45% खनन की ज़मीन यहीं है। यहाँ राज्य का 99% लोह अयस्क है। 150 सबसे 'पिछड़े' जिलों की सूची में यह जिला बीसवें नंबर पर है। गौर करने की बात है कि यहाँ 66% जनसंख्या आदिवासियों की है।

लोह अयस्क का ऊँचे ग्रेड का सबसे बड़ा भंडार इसी जिले में है। अनुमान लगाया गया है कि यह भंडार दो अरब टन का है। गुआ, चिरिया, किरिभुरु और नोआमुंडी, लोह अयस्क के लिए खनन के प्रमुख केंद्र हैं। चिरिया में खनन का काम 1936 से चालू है। अभी यहाँ के खनन का संचालन स्टील ऑथोरिटी ऑफ इंडिया लिमिटिड (सेल) के अंतर्गत होता है। राज्य सरकार की पूरी कोशिश है कि ये खदानें ऊँचे दामों पर आर्सेलर मित्तल या टाटा स्टील को बेच दी जायें। छोटानागरा से धोबिल तक चिरिया खदानें सारंडा के तीन प्रतिशत इलाके में फैली हैं। हर बारिश में यहाँ से खनन का कूड़ा बहकर खेती की ज़मीनों में चला जाता है, जिससे ये खेत बंजर होते जा रहे हैं। कई बारहमासी जलधाराएं सूख गयी हैं। गहरे गड्ढ़े किरिभुरु के आसपास जंगलों को क्षत-विक्षत

किये हुए हैं। कोइना और कारो नदियों का पानी पीने योग्य नहीं रहा है क्योंकि अयस्क को सीधा इन्हीं नदियों में धोया जाता है।

सारंडा क्षेत्र झारखंड उड़ीसा और छत्तीसगढ़ के त्रिकोण पर पड़ता है। इस क्षेत्र के 12,374 हेक्टेयर में करीब 44 लीजों के माध्यम से जंगल, नदी, खेतों की तबाही करता खनन जारी है। ऐसा बताया जाता है कि उन्नीस अन्य खनन परियोजनाएं स्वीकृत होने वाली हैं, जिनमें 11,000 हेक्टेयर और ज़मीन खनन के लिए ली जाएगी। खनन परियोजनाओं के लिए ज़मीन की मांग आनेवाले समय की एक झलक दिखाती है। आर्सिलर मित्तल ने 8,000 हेक्टेयर ज़मीन की माँग की है तो टाटा ने 4,800 हेक्टेयर की। जिंदल 1,800 हेक्टेयर ज़मीन हासिल करने की कोशिश में है। नीचे दिए 'सारंडा माइनिंग प्लान' से हम कुछ हद तक इस स्थिति को समझ सकते हैं:

कार्यरत खनन प्रोजेक्ट	**(क्षेत्र हेक्टे.)**
44 लोह अयस्क खनन लीज पश्चिम सिंहभूम में	12,384
एस.ए.आई.एल., चिरिया	2,376
उषा मार्टिन प्रा.लि., घाटकुरी संरक्षित वन	155
प्रस्तावित खनन प्रोजेक्ट –	
जे.एस.डब्ल्यू. स्टील लि., अनकुआ संरक्षित वन	1,388.5
एस्सार प्रा.लि., अनकुआ संरक्षित वन	568.7
टाटा स्टील लि., अनकुआ संरक्षित वन	1,808
इलेक्ट्रोस्टील कास्टिंग्स लि., कुदालीबाद संरक्षित वन	192.5
रूंगटा माइंस, कुदालीबाद संरक्षित वन	350
सनफलेग आयरन एंड स्टील लि., कुदालीबाद संरक्षित वन	120
आर्सेलर मित्तल, करमपड़ा संरक्षित वन	202.3
आर्सेलर मित्तल, करमपड़ा संरक्षित वन	662.95
आर्सेलर मित्तल, करमपड़ा संरक्षित वन	416
आर्सेलर मित्तल, घाटकुरी संरक्षित वन	3,150
भूषण पॉवर एंड स्टील लि., चाटूभूरु	422.75
ए.एल.एम. स्टील एंड पॉवर लि., बोकना	383.5
प्रसाद ग्रुप रिसौर्स प्रा.लि., बोकोना	110
होराईजन लोहा उद्योग, सतेतारुइया	215
प्रकाश इस्पात लि., घाटकुरी संरक्षित वन	–
अभिजीत इन्फ्रास्ट्रकचर प्रा.लि., सिल्पुंजी कंटोरिया	138.5
नीलांचल आयरन एंड पॉवर लि., सिल्पुंजी कंटोरिया	437
अनंदिता ट्रेडस एंड इन्वेस्टमेंट लि., परमबल्जोरी	46.6
ए.एल.एम. स्टील एंड पॉवर लि., बोकोना	383.5

(स्रोत : इंडियन ब्यूरो ऑफ माइन्स/मिनिस्ट्री ऑफ स्टील, उल्लेखित 'बिटवीन माओईस्ट एंड माइन्स', डाउन टू अर्थ, अप्रैल 30, 2012, से हिंदी में अनुवादित)।

संसाधनों की यह लूट पूरे प्रदेश में हो रही है। वर्ष 2009-10 में झारखण्ड में कोयले के उत्पादन में 10.04%, लोह अयस्क के उत्पादन में 7.87%, तांबे में 14.36%, बॉक्साइट में 5.34%, ग्रेफाइट में 96.84% की बढ़ोतरी हुई (वेबसाइट, मिनिस्ट्री ऑफ माइंस)। मशीनीकरण बढ़ने के साथ-साथ खनन के तरीके और घातक हुए हैं। अब पूरे के पूरे भूदृश्य को कुछ ही समय में बिगाड़ देना संभव है। खनन उद्योग में सिर्फ खदानें ही शामिल नहीं होतीं, बल्कि सड़क, रेलवे लाइन, स्टील प्लांट, अन्य सहायक कारखाने, टाउनशिप आदि भी स्थापित हो जाते हैं, जिससे प्रभावित ज़मीन खनन के लिए अधिकृत ज़मीन से कई गुना ज़्यादा होती है।

झारखण्ड में टाटानगर, बोकारो, धनबाद जैसे औद्योगिक नगरों के होने के बावजूद यहाँ के स्थानीय लोगों की अर्थव्यवस्था लगातार बिगड़ती गई है। यहाँ आदिवासियों

की ज़मीन से बेदखली रोकने के लिए, छोटानागपुर टेनेंसी एक्ट (सी.एन.टी.)1908 और संथाल परगना टेनेंसी एक्ट (एस.पी.टी.ए.)1949, जैसे कानून और 1996 में संसद द्वारा पारित पेसा कानून (पंचायत एक्सटेंशन इन शिड्यूल एरियाज़ एक्ट) मौजूद हैं, पर इन कानूनों को लागू नहीं किया जा रहा है। सी.एन.टी. एक्ट के तहत किसी 'लोक प्रयोजन' के लिए गाँववालों की सहमति से ज़मीन ली जा सकती है, लेकिन अब आदिवासी सवाल पूछ रहे हैं कि खनन के लिए किसी कंपनी को ज़मीन देना क्या 'लोक प्रयोजन' है? इसी तरह से वन अधिकार अधिनियम, 2006 के अंतर्गत आदिवासियों को ज़मीन पर कब्ज़ा दिए जाने का प्रावधान है, परन्तु इसे निष्फल करने के लिए सैन्य बल आदिवासियों के ज़मीन सम्बन्धी दस्तावेजों को ऑपरेशन ग्रीन हंट और एनाकोंडा जैसे ऑपरेशनों के ज़रिये नष्ट कर रहे हैं। सिंहभूम का इलाका पाँचवीं अनुसूची के अंतर्गत भी आता है, इस सूची में संविधान में आदिवासियों की सुरक्षा के लिए प्रावधान शामिल हैं। अतः कानूनी रूप से ज़मीन का गैर-आदिवासियों को हस्तांतरण यहाँ आसान नहीं है। इन सभी कानूनों के बावजूद, खनन के लिए ज़मीन बाँटने का काम जोर-शोर से जारी है।

'विकास' के नाम पर अक्टूबर 2011 में 263 करोड़ रुपये सारंडा क्षेत्र के लिए घोषित किये गये थे। इसमें सीआरपीएफ के कैंप स्थापित करने की लागत भी शामिल है। इसके अलावा, 104 करोड़ रुपये सड़क बनवाने में खर्च होंगे। जिस तरह की सड़कें इस लागत से बनायी जायेंगी, उससे यह संकेत मिलते हैं कि ये आदिवासियों के लिए नहीं, कंपनियों के भारी वाहनों मसलन डंपरों की आवाजाही और सैन्य बलों को जंगल तक ले जाने के लिये बनायी जा रही हैं।

अर्जुन मुंडा सरकार ने 2006 में दिनसुमबुरु खदान, थोलकोबाद से लोह अयस्क को साहेबगंज बरहेट रोड से चीन ले जाने के लिए चीन की कंपनी के साथ एम.ओ. यू. साइन किया। माओवादियों ने यहाँ खनन का काम शुरू नहीं होने दिया।

हमारा माानना है कि राज्य में विकास के इस मॉडल को लागू करने के उद्देश्य से सरकार को ऑपरेशन ग्रीन हंट जैसे ऑपरेशनों की ज़रूरत पड़ रही है। ये ऑपरेशन सिर्फ माओवादियों से निपटने के लिए ही नहीं, बल्कि ऐसी औद्योगीकरण नीतियों को लागू करने के लिए भी चलाए जा रहे हैं जिनका जनआंदोलनों द्वारा लगातार विरोध होता रहा है। जनता के खिलाफ युद्ध छेड़ने का मकसद बड़ी कॉरपोरेट कंपनियों को आर्थिक फायदे पहुँचाना है। राज्य की सैन्य शक्ति और कॉर्पोरेट कभी सीधे तो कभी परोक्ष रूप से एक-दूसरे की मदद करते हुए आदिवासियों के इस 'संहार' में लगे हैं।

झारखण्ड के जिले

वर्तमान पलामू प्रमंडल (डिविज़न) कभी झारखण्ड का एक बड़ा जिला हुआ करता था। गढ़वा और लातेहार इसी से काट कर बनाये गये थे। समूचा पलामू क्षेत्र जंगलों और छोटी पहाड़ियों से घिरा है। 2011 की जनगणना के मुताबिक जिले की कुल आबादी 19,36,319 है। यहाँ छोटी-बड़ी कई नदियाँ बहती हैं। जिनमें कोयल और औरंगा प्रमुख हैं। 250 किलोमीटर लंबी कोयल नदी यहाँ की जीवनरेखा है। लातेहार जिले की कुल आबादी 7,25,673 है। जिले में अनुसूचित जातियों का प्रतिशत 20.7 और अनुसूचित जनजातियों का 45.17% है। नीलाम्बर-पीताम्बर जैसे 1857 के शहीदों का पैतृक गाँव चेमू-सान्या, गढ़वा जिले में बसा है। इस जिले की कुल आबादी 13,22,387 है।

सारंडा पश्चिम सिंहभूम के दक्षिण छोर पर उडीशा से जुड़ा हुआ है। रांची से खूंटी जिला होते हुए यहाँ पहुँचा जा सकता है। रास्ते में पोडैयाहाट का जंगल का इलाका है जो खूंटी जिले में पड़ता है। यहाँ से वनों से आच्छादित पहाड़ी क्षेत्र फैला हुआ है। पूरब की ओर जंगल भी घना हो जाता है और दूर-दूर तक मिट्टी लाल दिखने लगती है। यही सारंडा का जंगल है जिसेके बीच 'हो' जनजाति-बहुल पचास से अधिक गाँव बसे हैं। क्षेत्र में सड़कें केवल उन्हीं जगहों में है जहाँ बड़ी-बड़ी कंपनियों की लौह अयस्क की खदान हैं।

भाग एक

ज़िलावार मामलों की पड़ताल

इस अध्याय में सुरक्षा बलों की ज़्यादतियों की कुछ घटनाओं का वर्णन है जो ऑपरेशन ग्रीन हंट के दौरान या उससे पहले घटीं और जिनकी पड़ताल हमारे जाँच दल ने की। ऑपरेशन ग्रीन हंट के शुरू होने से दमन में काफी तेज़ी आई और इस तरह की घटनाएं रोज़मर्रा की ज़िंदगी का मानो हिस्सा ही हो गई हैं।

ज़िला लातेहार

1. संजय प्रसाद, बरवाडीह – जाँच के पहले ही दिन जब हमारा दल सुबह लातेहार से निकलने वाला था, तभी संजय प्रसाद के पिता जयराम प्रसाद और भाई सतीश प्रसाद अपनी आपबीती सुनाने हमारे पास पहुँचे। उनका घर यहाँ से तकरीबन 20 किमी की दूरी पर था। 21 मार्च 2012 को सुबह 11.45 बजे 36 वर्षीय संजय को किसी पूछताछ के सिलसिले में थाने ले जाया गया था। जयराम के मुताबिक बरवाडीह थाने के इंस्पेक्टर का ड्राईवर गुलाम शेरख़ान और डी.एस.पी. झा का अंगरक्षक उसे घर से यह कहकर ले गये कि बड़े बाबू ने बुलाया है। जब शाम तक संजय घर नहीं लौटा तो उसके पिता थाने में पता करने गये, जहाँ उन्हें थाना प्रभारी द्वारा यह कहा गया कि वे संजय के बारे में कुछ नहीं जानते और ऐसे किसी शख्स को पूछताछ के लिए बुलाया ही नहीं गया था। घबराकर जयराम और सतीश ने अगले दिन राज्य के गवर्नर को अपनी परेशानी बताते हुए एक चिट्ठी फैक्स की। वे दोनों उपायुक्त और जिले के पुलिस अधीक्षक (एस.पी.) से भी मिले।

थाना प्रभारी के बयान से उलट, उपायुक्त ने बताया कि संजय को 21 तारीख की शाम को पूछताछ के बाद ही छोड़ दिया गया था। जबकि लातेहार एस.पी. क्रांति कुमार ने उन्हें बताया कि संजय 21 मार्च को पूछताछ के बाद जंगल की ओर चला गया था। उन्होंने संजय के परिजनों से यह भी कहा कि उसे 23 मार्च की रात 9 बजे मंडल और चेमू-सान्या के बीच जंगलों में पकड़ा गया था। उसके बाद भी चार दिनों तक संजय का कोई पता नहीं चला। अंततः 26 तारीख को अखबार में खबर छपी कि संजय को माओवादी होने के आरोप में लातेहार थानाक्षेत्र में पकड़ कर जेल भेज दिया गया था। बताया गया कि उसकी निशानदेही पर चेन-बम बरामद हुए। संजय पर मंडल और चेमू-सान्य के बीच बम लगाने का आरोप भी लगाया गया। यहाँ ध्यान देना ज़रूरी है कि इस साल इस इलाके में कोई भी बम विस्फोट नहीं हुआ है। घटनाक्रम से स्पष्ट है कि संजय को चार दिनों तक पुलिस हिरासत में ही रखा गया होगा। और बाद में अखबारों में गुमशुदगी की रिपोर्ट उजागर होने पर उस पर झूठा आरोप लगाकर फंसा दिया गया होगा। यानी उस पूरी अवधि के दौरान जब उसके परिजनों को यह बताया जा रहा था कि उसे पहले दिन ही छोड़ दिया गया था, वह असल में पुलिस की ही हिरासत में था। संजय बरवाडीह बस स्टैंड के पास 4 साल से सिम कार्ड और स्कूटर पार्ट्स की एक दुकान चला रहा था। उसके परिवार में पिता और भाई के अलावा, माँ, बीवी और दो बच्चे हैं। इस हादसे के बाद उनका परिवार पूरी तरह सदमें में है।

2. जसिंता देवी, लादी गाँव, गारू थाना – यह घटना ऑपरेशन ग्रीनहंट के शुरूआती दौर की है। लादी गाँव पक्की सड़क से कम से कम 4 किलोमीटर दूर है। 27 अपैल 2010 को गाँव के एक चबूतरे पर एक माओवादी दस्ता कुछ देर आराम कर रहा था। जसिंता देवी का घर गाँव के शुरू में ही है। गाँववालों के अनुसार माओवादियों ने पहरा देने के लिए अपना एक संतरी जसिंता देवी के घर के पिछवाड़े में खड़ा किया हुआ था।

तभी एकाएक सीआरपीएफ का दल वहाँ आ पहुँचा। अपने इस अचानक हमले का लाभ सैन्य बलों को मिला। उन्होंने माओवादी संतरी को मार डाला। बाकी माओवादी कोई बड़ी जवाबी कार्रवाई किये बिना ही वहाँ से भागने को मजबूर हो गये।

इसके बाद सीआरपीएफ ने जसिंता देवी के घर में माओवादियों के छिपे होने का आरोप लगाया और घर को आग लगाने की धमकी देकर सभी को बाहर आने को कहा। उस वक्त घर पर जसिंता देवी, उनके तीन बच्चे, सास, विश्राम सिंह और पूरण (एक बूढ़ा चरवाहा) मौजूद थे। जसिंता देवी के देवर विश्राम सिंह के हाथ बाँध दिये गये। जसिंता देवी ने सुरक्षा बलों से घर के पिछवाड़े में लेटे बूढ़े चरवाहे को बुलाकर लाने की इजाज़त मांगी। जैसे ही जंसिता देवी चरवाहे के साथ आंगन में पहुँचीं, उन्हें गोलियों से भून दिया गया। उन्होंने वहीं अपनी आखिरी सांस ली, जबकि चरवाहा गोली से घायल अवस्था में मूर्छित पड़ा रहा।

विश्राम सिंह ने हादसे के बाद जसिंता देवी और माओवादी संतरी की लाश को पुलिस की गाड़ी में लादा और बरवाडीह थाने जाकर प्राथमिकी दर्ज कराने का प्रयास किया। उनसे कहा गया कि दोनों की हत्या क्रॉस-फायरिंग में हुई। पुलिस द्वारा दर्ज की गयी प्राथमिकी के अनुसार भी जसिंता देवी क्रॉस-फायरिंग में मारी गयीं। जबकि टीम के सदस्यों ने जसिंता देवी के घर का निरीक्षण करने पर पाया कि घर की दीवारों पर एक ही दिशा में पाये गये निशान साफ़ बयान करते हैं कि गोलीबारी एक तरफा थी, और जसिंता देवी इसी एक तरफा गोलीबारी की शिकार हुई थीं।

इस हत्याकाण्ड के बाद पुलिस ने यह घोषणा की कि परिवार वालों को पाँच लाख रुपये और परिवार के एक सदस्य को नौकरी दी जाएगी। लेकिन अब तक उस परिवार को सिर्फ एक लाख रुपये ही मुहैया कराये गये हैं, और किसी को नौकरी नहीं दी गयी है। दोषी पुलिसकर्मियों के खिलाफ भी आज तक कोई कार्यवाही नहीं हुई है।

जाँच दल के एक स्थानीय सदस्य के अनुसार वे हादसे के कुछ दिन बाद पूरण चरवाहे से सदर अस्पताल में मिलने गये थे। अकेले में हुई बातचीत में, पूरण ने भी वही बताया जो विश्राम सिंह ने टीम को बताया था। अस्पताल में अपनी आपबीती सुनाने के बाद पूरण चरवाहे को गायब कर दिया गया। गाँव वाले अभी उनकी तलाश कर रहे हैं पर आज तक उनका कोई पता नहीं चल पाया है।

3. लूकस मिंज़, नवरनागू गाँव, पंचायत लात, बरवाडीह पुलिस स्टेशन – नवरनागू गाँव खरवार और उराँव जनजाति बहुल है। पक्की सड़क से इस गाँव तक पहुँचने के लिए आदिवासियों को 8 किलोमीटर पैदल जंगल में से गुजरना पड़ता है। गाँव में पानी, बिजली की कोई सुविधा नहीं है।

31 जनवरी 2012 को नवरनागू गाँव के निवासी लूकस मिंज़, जो कि जन्म से गूँगे और बहरे थे, हमेशा की तरह अपनी गाय-भैंस चराने नदी की ओर निकले थे। उस दिन के बाद वे वापस लौट कर नहीं आये। इन्हीं दिनों 31 जनवरी से 5 फरवरी तक 'ऑपरेशन मार्क्स' चल रहा था। इसीलिए गाँव वालों का घर से बाहर निकलना खतरे से खाली नहीं था। इस कारण लूकस के परिजनों को कई दिन तक उनकी कोई खबर नहीं मिल पायी। आखिरकार दो मछुवारों को उनका गला हुआ शव 4 फरवरी को कोयल नदी में मिला। परिवार वालों ने पाया की शव पर गोलियों के निशान थे। परिवार और गाँव वाले तुरंत शिकायत दर्ज़ कराने बरवाडीह थाने पहुँचे, थाना के प्रभारी ने लूकस का शव पोस्टमार्टम के लिए रिम्स अस्पताल भिजवा दिया। पोस्टमार्टम से पता चला कि लूकस के शरीर में दो गोलियाँ लगी थीं और उनकी मौत 31 जनवरी को हुई थी। आज तक परिवार को कोई न्याय नहीं मिला है। न तो कोई मुआवजा मिला और न ही किसी पुलिसकर्मी के खिलाफ कोई कार्यवाही हुई।

यह ध्यान देने की बात है कि जिस दिन लुकस मिंज की हत्या हुई उसके एक दिन पहले और उस दिन (30-31 जनवरी 2012) माओवादियों और सुरक्षा बलों के बीच में युद्ध विराम की स्थिति होनी थी। और इसी युद्ध विराम के दौरान माओवादियों द्वारा अगुवा किए गए एक पुलिस कांस्टेबल की रिहाई पीयूसीएल के दो वरिष्ठ सदस्यों के समक्ष होनी थी। जहाँ माओवादियों की तरफ

से सैन्य कार्यवाही रोक दी गई थी, वहीं दूसरी तरफ सुरक्षा बल ऑपरेशन मॉर्क्स के नाम पर अभियान जारी रखे हुए थे।

इसका एक और उदाहरण एक अन्य घटना है। 31 जनवरी को ही 'ऑपरेशन मार्क्स' के दौरान देवती देवी की 16 वर्षीय बेटी, 7 वर्षीय भतीजी और बहन को सीआरपीएफ कैंप में रात भर बिना किसी महिला पुलिस की मौजूदगी के रखा गया। 31 जनवरी को ही पुलिस ने लूकस के एक और भाई प्रकाश मिंज़ से काम पर जाते समय रोक कर पूछताछ की। उसी दिन इनके घर की तलाशी भी ली गयी। साथ ही मुनेश्वर सिंह नाम के एक गाँववासी को ए.सी.पी. चंद्रमोहन द्वारा प्रताड़ित किया गया। मुनेश्वर अपने भाई की शादी की तैयारी करके लौट रहे थे, जब पुलिस ने उन्हें रोककर माओवादी होने का इल्जाम लगाया और पिटाई की, गाँववालों के दबाव डालने पर ही उनको छोड़ा गया।

'लूकस मिंज़ की हत्या के एक दिन पहले, यानी 30 तारीख को 2 कि.मी. की दूरी पर करमडीह में शाम 7 बजे पुलिस और माओवादियों में ज़बरदस्त क्रॉस-फायरिंग शुरू हुई थी। यह देर रात तक चलती रही। आसपास की दीवारों में गोलियों के कई निशान अब भी बने हुए हैं। करमडीह के स्कूल को सी.आर.पी.एफ ने अपने कैम्प के रूप में तब्दील कर रखा था। अर्द्ध-सैनिक बलों ने आसपास के घरों की दीवारों और बाड़ों को भी खोद डाला था। सीआरपीएफ ने ज़मीन की खुदाई इसलिए की थी कि उनको वहाँ माओवादियों द्वारा हथियार छिपाये जाने का अंदेशा था। पर खुदाई में कुछ नहीं मिला था। स्कूल में सीआरपीएफ बनने के बाद बच्चों ने स्कूल आना बंद कर दिया था। क्रॉस-फायरिंग के परिणामस्वरूप सीआरपीएफ को यह स्कूल खाली करना पड़ा। लोगों का यह मानना है कि इसके बाद ही सीआरपीएफ ने लूकस मिंज़ की हत्या की। यानि की यह करमडीह स्कूल के अपने कैम्प को खाली करने को मजबूर होने पर सीआरपीएफ की ओर से की गयी जवाबी कार्रवाई थी।

जाँच दल को वहाँ से लौटने के कुछ दिन बाद यह पता चला कि लूकस मिंज़ के भाई विलियम मिंज़ को सैन्य बलों ने बुरी तरह प्रताड़ित किया। साफ है कि जाँच दल को सच्चाई बताने और मीडिया में लूकस मिंज़ की हत्या के मसले के उजागर हो जाने की वजह से विलियम को प्रताड़ित किया गया।

इसी तरह से हमें यह भी पता चला कि सिल्वेस्टर मिंज़ को अर्द्धसैनिक बलों ने इतना पीटा कि उनके रीढ़ की हड्डी का ऊपरी हिस्सा टूट गया। उन्हें बाज़ार से घर आते समय सवारी गाड़ी से उतरा गया। रोड़ पर ही बहुत लंबे समय तक सर के बल खड़ा किया गया और उसी स्थिति में गर्दन पर ज़ोर से लात मारी गयी। जिससे कई दिन बाद तक जब वह अपनी गर्दन हिला नहीं सके तो पता चला कि रीढ़ के ऊपरी हिस्से में गर्दन के पास कुछ टूटा है।

उन गाँव वालों को प्रताड़ित करना जिनके साथ जाँच दल ने बात की, दमन का का ही हिस्सा है। राज्य के दमन का यह आलम है कि जब लोग अपने पर हुए अत्याचार के बारे में बात भी करते हैं तो उन्हें और अधिक दमन का सामना करना पड़ता है मानो अभिव्यक्ति इस इलाके में न केवल प्रतिबंधित है बल्कि एक अपराध भी है।

4. गाँव बहेराटाड़, सरयू पहाड़ के निकट, ब्लॉक लातेहार - यह गाँव आदिम जनजाति परहिया द्वारा बसाया गया था। गाँव में सिर्फ 40 परिवार हैं यहाँ आज तक कोई सरकारी सुविधा नहीं पहुँच पायी हैं। इस गाँव को मुंडारी खुंटकट्टीदार के रूप में मान्यता मिली हुई है। संथाल परगना एक्ट के तहत जिन जंगलों को आदिवासियों ने काट कर विगत में गाँव के रूप में बसाया था, वे मुंडारी खुंटकट्टीदार की श्रेणी में आते हैं और आदिवासियों को ज़मीन का लगान सरकार को नहीं देना होता है। दूसरी ओर वन अधिकार अधिनियम के अंतर्गत आदिम जनजाति के लोगों को वनभूमि पर पट्टे काट कर दिये जाने का प्रावधान भी है। ग्राम के प्रधान बीफा परहिया तक ने बताया कि अधिनियम के तहत ज़मीन के कागज़ तो उन्हें दिये गये हैं, पर उन्हें पता नहीं है कि ज़मीन कहाँ है।

6 फ़रवरी 2012 सीआरपीएफ इस गाँव में यह आरोप लगाते हुए घुसी की गाँव वाले माओवादियों को खाना और राशन देते हैं। और इसी इल्ज़ाम में ग्राम

प्रधान बीफा परहिया समेत गाँव के 9 व्यक्तियों को उठाकर अपने कैंप में ले गये और उन्हें वहाँ पीटा गया। इसी पिटाई में लगी चोट से प्रधान बीफा की दाहिनी आँख की रोशनी लगभग लुप्त हो गयी है। इन लोगों को केवल शक की बुनियाद पर अर्द्धसैनिक बल ने उस वक्त पीटा जब वे उनकी हिरासत में थे और हिरासत में प्रताड़ित किया जाना जघन्य अपराध माना जाता है। बीफा के पास न तो खेत हैं और न ही इतनी पैदावार जिससे कि उनके परिवार का पालन पोषण हो सके। दो महीनों में उन्हें सरकार से 35 किलो चावल मिलता है। परिवार में चार सदस्य हैं। सरकार के 35 किलो चावल उनके परिवार के लिए इतना कम है कि उनकी खुराक भी अपर्याप्त है।

घटना के अगले दिन ग्राम पंचायत में मुद्दा उठा, तो गाँव वाले मिलकर लातेहार थाने जाकर रिपोर्ट लिखवा आये। उसके बाद से केवल प्रधान को आँख के इलाज के लिए पाँच हज़ार रुपये दिये गये हैं। जाँच के लिए एक वरिष्ठ पुलिस अधिकारी भी गाँव में आया था, मगर आज तक कोई परिणाम नहीं निकला है।

गाँव वालों ने बताया कि गाँव से कुछ दूरी पर एक स्कूल है, जहाँ सी.आर.पी.एफ का कैम्प बना हुआ था। आदिम जनजाति के बच्चों के लिए बने इस स्कूल में अर्द्धसैनिक बल के जवानों के डेरा डालने के बाद से इन बच्चों को स्कूल जाना बंद करना पड़ा। उक्त घटना के खबरों में आ जाने के बाद कैम्प को वहाँ से हटा कर एक नया पिकेट, उसी स्कूल के बिल्कुल पास बना दिया गया। इस स्थाई पिकेट की दीवारें सीमेंट और ईंटों से बनी हैं और बोरियों में मिट्टी या बालू भरकर चारों तरफ से घेरा हुआ है। यानि स्कूल के ठीक सामने एक फ़ौजी अड्डा बन गया है।

जिला पंचायत अध्यक्ष के निवास के पास जाँच दल को एक बहुत बड़ा सी.आर.पी.एफ कैंप मिला जो एक कन्या विद्यालय के भवन और छात्रावास की दीवार से बिल्कुल सटा हुआ है। ऐसे ही पूरे पलामू प्रमंडल में सैन्य बलों ने विद्यालयों और कॉलेजों को अपने कब्ज़े में लिया हुआ है। जिला एवं प्रमंडल मुख्यालय डाल्टनगंज के मशहूर गणेश लाल अग्रवाल कॉलेज की लाईब्रेरी और खेल के मैदान भी सीआरपीएफ कैम्प में परिवर्तित हो चुके हैं।

5. बिरजू उराँव, ग्राम मुर्गीडीह, ब्लॉक लातेहार- इस गाँव के युवा बिरजू उराँव को सीआरपीएफ ने चतवाकरम नामक बाज़ार में उस वक्त पकड़ा जब वे 7-8 फरवरी 2012 की रात एक विवाह समाराह से वापस लौट रहे थे। सुरक्षा बलों ने उन्हें न केवल बुरी तरह पीटा, बल्कि तार काटने वाले औज़ार से सभी अँगुलियों के छोरों को काट दिया। उसका अपराध यह था कि वह रात को घर के बाहर था और कोई भी आदिवासी अगर रात को बाहर दिखता है तो सुरक्षाबल उसे माओवादी समझते हैं। जब मामला स्थानीय अखबारों में छपा तो स्थानीय पत्रकारों की मौजूदगी में बिरजू को मुआवज़े के तौर पर एक बोरा चावल दिया गया। मनिका विधायक हरिकृष्ण सिंह पीड़ित के घर जाकर इलाज करवाने के लिए एक हज़ार रुपये दे आये। लेकिन जब इस घटना की खबर दूर तक फैली तब पुलिस ने मामले को दबाने के लिए प्रेस-वार्ता आयोजित कर के बिरजू से जबरन यह बयान दिलवाया कि घटना के समय वह शराब पिये हुए थे, इसलिए स्पष्ट रूप से नहीं बता सकते कि हमलावर सीआरपीएफ के ही थे या कोई और वर्दीधारी। इससे यही पता चलता है कि सैन्य बल इस इलाके के आम जनजीनव को, रोजमर्रा के कामकाज को किस कदर प्रभावित कर रहे हैं और लोगों का जीना कितना दूभर हो गया है।

6. संतोष कुमार, मंडल खास, ब्लॉक बरवाडीह- यह घटना 2004 की है। 26 वर्षीय मनोज कुमार चौधरी उर्फ छोटू, मंडल खास के निवासी थे। वे वहाँ अपने 2 भाइयों, भाभी और माता-पिता के साथ रहते थे। रोज़ की तरह 6 जनवरी 2004 को वे मंडल बाज़ार में स्थित अपनी दुकान में मोटर-बाइक व स्कूटर ठीक करने का काम कर रहे थे। उस शाम 5 बजे के करीब खुदी सिंह नाम का एक व्यक्ति अपनी मोटरसाइकिल ठीक करवाने छोटू की दुकान पर आया था। वे मोटरसाइकिल ठीक कर उसे चेक कर ही रहे थे कि अचानक सादे कपड़ों में 5 आदमियों ने उनकी की दुकान पर हमला बोल दिया। असल में वे पुलिसकर्मी थे जो तथाकथित माओवादी

खुदी सिंह को पकड़ने आये थे। बदकिस्मती से उस समय छोटू खुदी राम की मोटरसाइकिल पर बैठ कर गाड़ी के ठीक हो जाने की जाँच कर रहे थे। उन दोनों को माओवादी कहकर पुलिस ने उन्हें वहीं मार दिया। छोटू के छोटे भाई सुभाष, जो पेशे से ड्राईवर हैं, उसी शाम घर आये हुए थे। आते ही उन्होंने अपने भाई की हत्या अपनी आँखों के सामने होते हुए देखी। जब सुभाष को पता चला कि सी.डी.आर.ओ. की कोई टीम लातेहार पहुँची है, तो वे हमारे पास पहुँचे। उन्होंने बताया कि 'भैया की लाश पुलिस मौके से उठाकर चली गयी और उसके बाद किस्सा खत्म ... तीन वर्ष पहले पिताजी इसी सदमे से चल बसे।''

मनोज के परिवार ने राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग में अर्जी दी थी, पर आज तक उनको किसी प्रकार का जवाब या राहत नहीं मिली है। तत्कालीन एस.पी. विश्वास भजन ने माना कि मनोज के खिलाफ कोई अपराध दर्ज नहीं था। इसके बावजूद आज आठ सालों के बाद भी हत्या के दोषी पुलिसकर्मियों को सज़ा होना तो दूर, दफा 302 का मुकदमा भी दर्ज नहीं हुआ है। जाहिर है कि जिस क्षेत्र में आज ऑपरेशन ग्रीनहंट चल रहा है, वहाँ उसके पहले से ऐसी घटनाएं होती थीं, पर आज की तरह ही तब भी पुलिस को दोषी तो दूर, आरोपी ठहराना भी एक संघर्ष था।

ज़िला गढ़वा

1. बलीगढ़ और होमिया गाँव, रमकंडा ब्लॉक- गढ़वा जिले के होमिया गाँव में लगभग 130 परिवार रहते हैं। इनमें 45 उराँव, 75 मुंडा (भुइंहर, नागवंशी मुंडा आदि), 8 कोरबा (आदिम जनजाति), और 12 लोहरा जनजाति के परिवार शामिल हैं। मुख्य रूप से यहाँ के लोग खेती-बाड़ी से ही अपनी जीविका चलाते हैं। हर परिवार में से औसतन एक व्यक्ति कमाई के लिए चेन्नई, छत्तीसगढ़, गोवा, उड़ीसा, सूरत तक पलायन करता है। इसके अलावा यहाँ के लोग नरेगा में भी ठेका मजदूरी कर के अपना गुज़ारा करते हैं। इन गाँवों में नरेगा के तहत वेतन एक साल से नहीं मिला है।

यहाँ हमारे जाँच दल के पहुँचते ही गाँव के कुछ लोगों ने गाँव वालों की सभा बुला ली। वहाँ के संघर्ष के मुद्दों पर बातचीत के दौरान पता चला कि होमिया गाँव में आधी ज़मीन जंगल क्षेत्र में पड़ती है और आधी पर लोग खेती करते हैं। आदिम जनजातियों के सभी 8 परिवारों के पास कुल मिलाकर 13 एकड़ ज़मीन है जबकि बाकी हर परिवार के पास लगभग चार से पाँच एकड़ ज़मीन है। इस गाँव के निवासियों को भूमि अधिकार दो स्त्रोतों से प्राप्त हुआ है। पहला - राजा द्वारा जारी किये गये पट्टों द्वारा, और दूसरा, पाँच दशक पहले चले भूदान अभियान द्वारा। 70 साल पहले दूसरे किसी गाँव के रामलगन पाण्डेय नाम के व्यक्ति को पंडित होने के आधार पर होमिया के स्वर्ण जातियों के लोगों ने बसने के लिए ज़मीन दी थी। बाद में वह बहुत से लोगों की ज़मीन हड़प कर वहाँ का बड़ा सामंती ज़मींदार बन गया। फिलहाल उसी का बेटा राम नारायण उर्फ फुल्लू पाण्डेय इलाके पर दबदबा कायम किये हुए है।

बलीगढ़ एक बड़ा गाँव है जिसकी आबादी तकरीबन 10,000 के आसपास है। इस गाँव में भुईया लोगों के करीब 500 घर हैं और बाकी घर खारवार और गोंड जनजातियों के हैं। 12 किलोमीटर के क्षेत्रफल में फैले इस गाँव के बीच से पोपरा नदी बहती है।

गत वर्ष जब गाँववासी ज़मीन का कर जमा करने गये, तो पता चला कि जिस ज़मीन के लिये वे कर जमा करवाने आये हैं वह उनकी है ही नहीं। जबकि वे 2009 तक अपनी इस ज़मीन का कर देते आ रहे थे। फुल्लू पाण्डेय और 5 अन्य दलालों ने 2010 में गाँववालों की जानकारी के बिना उनकी ही ज़मीन अपने नाम लिखवाकर कुछ कॉर्पोरेट घरानों को बेच दी। इसमें से कुछ ज़मीन ऐसी थी जो गाँव के आदिवासी और दलित समेत कुछ गरीब किसानों को 25 वर्षों की लड़ाई के बाद मिली थी। जिस गैरमजरुआ आम ज़मीन को भुइया लोगों को दिया गया था, उनके पट्टे में स्पष्ट रूप से अंकित है कि इस ज़मीन का हस्तांतरण एवं खरीद फरोक्त नहीं हो सकता है। कुछ-एक मध्यम किसान भी इस जालसाझी का शिकार हुए हैं। जिन कॉर्पोरेट घरानों को यहाँ के स्थानीय सामंती तत्वों की मिलीभगत से ज़मीन बेच दी गयी, वे एस्सार और जिंदल जैसी बड़ी कंपनियाँ हैं। हस्तांतरित

ज़मीन सैकड़ों एकड़ है। इसमें शामिल भूदान की ज़मीन तो कानूनी तौर पर खरीदी-बेची भी नहीं जा सकती। इस तरह होमिया में कुल 115 एकड़ और बलीगढ़ में 338 एकड़ ज़मीन हथिया ली गयी। ऐसा बताया जाता है कि अकेले फुल्लू पाण्डेय ने इसमें से कुल 132.83 एकड़ का सौदा किया।

फुल्लू पाण्डे पर गाँव में बलात्कार और मारपीट करने के कई आरोप भी हैं। परन्तु किसी एक मामले में भी उसको कभी कोई सज़ा नहीं हुई है। उसने कई घरों में आगजनी की घटनाएँ भी करवायी हैं। गाँव वालों के अनुसार उसने पुलिस को बुलवाकर गाँववालों के घर भी उज़ड़वाये हैं। फुल्लू पाण्डे अब इस गाँव से 15 कि.मी. दूर एक छोटे कस्बे में ठाठ से रहता है। हमें बताया गया कि गाँव के गरीबों ने कई साल पहले गिरधारी पाण्डेय नाम के एक सामंत को, जिसने उनकी ज़मीन पर कब्ज़ा कर लिया था, लाठियों से पीट कर मार डाला था। ज़मीन पर अवैद्य कब्जे और उससे जुड़ी वारदातों पर कानूनी संघर्ष अभी चल रहा है।

बड़ी तादाद में पुलिस और अर्द्धसैनिक बलों के आगमन के साथ बदले शक्ति-संतुलन के कारण आज इस क्षेत्र के 10,000 निवासियों पर जीवन, आजीविका और सुरक्षा का खतरा और गहराया गया है।

2. रामदास मिंज़ और फ़िदा हुसैन, कोमीकोला गाँव, बरगढ़ ग्राम पंचायत, भंडरिया ब्लाक – 21 जनवरी 2012 की सुबह ग्राम पंचायत के मुखिया रामदास मिंज़ और उसी गाँव के फ़िदा हुसैन और तीन अन्य लोगों को यह कहकर पुलिस ने उठा लिया की उन्होंने माओवादियों को भोजन खिलाया था। लेकिन वास्तविक मुद्दा कुछ और ही था। उस दिन ग्राम पंचायत की उस ज़मीन पर जो की आदिवासियों को बाज़ार के लिए मिली हुई है, अवैध तरीके से एक उप-स्वास्थ्य केन्द्र बनाने के विरोध में एक शान्तिपूर्ण धरना चल रहा था। कानूनी तौर पर देखें, तो पंचायत से जुड़े निर्माण कार्यों का फैसला और क्रियान्वयन 1996 के पेसा कानून के तहत यहाँ की चुनी हुई पंचायत संस्था के अधिकार क्षेत्र में आता है। यह ज़मीन वैसे भी बाज़ार समिति क्षेत्र के अंतर्गत पड़ती है और कई गाँवों के लोग अपनी वन उपज बेचने के लिए इस बाज़ार में आते हैं। टेहरी, बरगढ़ और परसवार ग्राम पंचायत के साथ-साथ छत्तीसगढ़ के कुछ सटे हुए गाँवों के लोग भी यहाँ आमदनी कमाने आते हैं। इसी संदर्भ में उप-स्वास्थ्य केन्द्र का निर्माण जनविरोधी था। जिसे रोकने के लिए ग्राम सभा की ओर से कम से कम 3 अर्जियाँ स्वास्थ्य विभाग को दी जा चुकी थीं। मुखिया रामदास मिंज़ और फ़िदा हुसैन ही इस अभियान का नतृत्व कर रहे थे और इन्हें रोकने के लिए इन पर यह आरोप मढ़ा गया कि इनकी माओवादियों से सांठ-गांठ थी। इन्हें एक थाने से दूसरे पिकेट पर ले जाने के बाद अंतत: जेल में डाल दिया गया। इसके अलावा कपड़े उतरवाकर इनकी बेरहमी से इनकी पिटायी की गयी।

उसी दिन जब उपरोक्त पाँच व्यक्तियों से थाने में पूछताछ हो रही थी, इस इलाके में माओवादियों ने बारूदी सुरंग से विस्फोट किया। पुलिसवालों ने इसका दोष भी हिरासत में लिये गये व्यक्तियों पर ही मढ़ दिया। गाँववालों के एक शान्तिपूर्वक धरने को, जो उसी सुबह एक उपस्वास्थ्य केन्द्र के निर्माण के विरुद्ध चल रहा था, माओवादियों के बम विस्फोट के ओट (कवर) का नाम दे दिया गया। रामदास और फ़िदा पर आई.पी.सी. की धाराएं 147, 148, 149, 171, 341, 342, 302, 307, 353, 427, 329, 435; सी.एल.ए. की धारा 17; यू.ए.पी.ए. की धाराएं 38 व 39; और ऑर्म्स एक्ट की धारा 27 के तहत संगीन आरोप लगा दिए गए हैं।

यह घटना इस बात का ज्वलंत उदाहरण है कि किस प्रकार प्रशासन माओवादियों के खिलाफ लड़ने की आड़ में गाँव के जायज संघर्षों को दबा रहा है। ग्रामीणों का संघर्ष उप-स्वास्थ्य केन्द्र बनाकर रोजी-रोटी कमाने की उनकी ज़मीन छीने जाने के विरुद्ध ही नहीं, बल्कि इस प्रकार दलाल किस्म के कुछ ठेकेदारों को लाभ पहुँचाने की प्रशासनिक चाल के विरुद्ध भी था। अपनी कुछ सहज मांगों को उठाने पर गाँववालों पर संगीन आरोप लगाकर उन पर जुल्म ढाना इन इलाकों में एक प्रथा सी बन गयी है।

3. कुटकु मंडल बाँध परियोजना, सान्या गाँव – सान्या गाँव झारखंड के वीर नायक नीलाम्बर और

पीताम्बर का पुश्तैनी गाँव है। उन्हीं नीलाम्बर-पीताम्बर का, जिन्होंने भूमि अधिकार के लिए अंग्रेजों से लोहा लेकर 1857 में अपनी जान कुर्बान की थी। आज यही गाँव गायब कर दिये जाने की कगार पर है। सान्या गाँव उन 32 गावों में से एक है जो कुटकु-मंडल बाँध के निर्माण की वजह से डूब क्षेत्र में पड़ते हैं। इसी बाँध परियोजना के कारण 13 और गाँव भी प्रभावित की श्रेणी में घोषित कर दिये गये हैं।

कुटकु बाँध का काम जनता के विरोध के चलते 1997 में स्थगित कर दिया गया था। इस विरोध का तात्कालिक कारण यह था कि बाँध के इंजीनियर बैजनाथ मिश्रा ने 16 अगस्त 1997 को ग्रामीणों के प्रतिरोध को तोड़ने की मंशा से बांध का अस्थाई गेट बंद कर दिया, जिससे आई बाढ़ में आस पास के 32 गाँव रातों-रात डूब गये थे और करीब 1100 परिवार हताहत हुए थे। इस कांड में 21 लोग डूबकर मर गए थे। इस दौरान बहुत से जानवर भी मरे, और बहुत सी सम्पत्ति भी नष्ट हुई। गाँव के बुजुर्गों ने बताया कि तसले की नाव बनाकर लोगों को बचाने का काम किया गया था। 16 अगस्त को माओवादियों ने बांध के इंजीनियर बैजनाथ मिश्रा की हत्या कर दी थी। इस घटना के बाद से परियोजना बंद पड़ी हुई है। पीढ़ियाँ बदल चुकी है और आज भी लोग अपनी ज़मीन किसी भी मुआवजे के बदले देने को तैयार नहीं हैं। अस्सी के दशक में इस परियोजना के तहत गाँव वालों के लिए 1912-16 में हुए एक सर्वे के आधार पर मुआवज़ा तय किया गया था। सर्वे के लगभग सौ साल बाद परिवारों में लोगों की संख्या और घरों की संख्या में कई गुणा बढ़ोतरी हो गई है। लिहाजा इस सर्वे पर निर्भर रहने का मतलब है कि सिर्फ कुछ ही लोगों को मुआवज़ा मिल पाएगा।

1972 में 14000 प्रति एकड़ की दर से मुआवज़ा तय हुआ था। लेकिन 1984 तक सिर्फ आधे ही लोगों को मुआवज़ा दिया गया। इसके अलावा भंडरिया मुख्यालय से 4 किलोमीटर की दूरी पर रामर-मरदा में लोगों को पुनवार्सित किया गया था। मगर वहाँ कोई सुविधाएँ नहीं दी गयीं। जैसा कि प्रभावित परिवारों के लोगों ने बताया, वहाँ की ज़मीन पहले साल में दो फसलें देती थी, आज पानी का स्वाभाविक प्रवाह बदल जाने और भूगर्भीय जल की कमी के कारण एक फसल भी बड़ी मुश्किल से दे पा रही है।

इसके अलावा चूंकि अब इस इलाके को डूब क्षेत्र घोषित कर दिया गया है, यहाँ कोई सरकारी सुविधा उपलब्ध नहीं है। आंगनबाड़ी, स्वास्थ्य केन्द्र, राशन, पानी, बिजली जैसी हर सुविधा से यहाँ के गाँववासी वंचित हैं। एक झोलाछाप डाक्टर था, उसे भी पुलिस ने यह कहकर इलाज करने से रोक दिया है कि वह माओवादियों का भी इलाज करता था। इस स्थानीय स्वनियुक्त स्वास्थ्य कर्मी मनबोध सिंह को बीते साल दीवाली से एक हफ्ता पहले सीआरपीएफ द्वारा अपने कैंप में ले जाया गया और 31 जनवरी 2012 तक अवैध हिरासत में रखा गया। उसकी इलाज के नुस्खों की किताब छीन ली गई और उसे कोई और काम करने पर मजबूर किया गया।

यह गाँव जंगल के बीचो-बीच पड़ता है। इसीलिए यहाँ के हर व्यक्ति पर माओवादी होने का शक किया जाता है। इसी शक के आधार पर इनको प्रताड़ित किया जाता है। इसकी वजह से इस गाँव के लोग पुलिस एवं अर्द्ध-सैनिक बलों के भय के बीच जीते हैं। स्थिति यह है कि गाँव के कई युवक गाँव छोड़कर चले गये हें। जोखन सिंह जो इलाहाबाद व बनारस में मजदूरी करने जाते हैं, जब भी काम से छुट्टी लेकर गाँव लौटते हैं, पुलिस व अर्द्ध-सैनिक बल उन्हें प्रताड़ित करने आ जाते हैं। इन्हें बरगढ़ के बारूदी सुरंग विस्फोट की उस समय हुई घटना के लिए भी आरोपी बनाया गया है जिस दौरान वे बाकायदा इलाहाबाद के पास एन.टी.पी.सी. के एक बड़े ताप-विद्युत कारखाने में ठेकेदार के अधीन ठेका-मजदूरी कर रहे थे। आये दिन पुलिस गाँव में माओवादियों की खोजबीन के बहाने जाती है। पहले वे एक साथ पट्रोलिंग की शैली में आते थे। अब जब से माओवादियों ने पट्रोलिंग करने वाले सरकारी बलों पर एम्बुश और बारूदी सुरंग से विस्फोट तेज कर दिये, तब से अर्द्ध-सैनिकों के बटालियन और प्लाटून यहाँ छापामारी की शैली में जंगल के रास्ते अचानक गाँव पर आ धमकते हैं। जब लोग अपने घरों में ताले लगाकार खेत पर गये होते हैं तो सैन्य

बल उनके घरों के ताले तोड़ देते हैं और उनके अनाज को बिखरा जाते हैं। हमारी रिपोर्ट लिखे जाने के दौरान पता चला कि इन गाँवों में 'ऑपरेशन ऑक्टोपस' चलाया जा रहा है। इस दौरान यहाँ कुछ गामीणों की अर्द्ध-सैनिक बलों द्वारा हत्या किये जाने की अपुष्ट खबरें मिली हैं, और साथ ही माओवादियों द्वारा उनके वाहन उड़ाकर गंभीर क्षति पहुंचाने की भी खबरें भी मिली हैं। गृह-युद्ध जैसे हालात की इन घटनाओं की जाँच पड़ताल कर के देश के सामने सच्चाई को उजागर करने के लिए कोई भी निष्पक्ष जरिया मौजूद नहीं है।

जिला पलामू

राजेंद्र यादव, थाना छतरपुर, रुदवा ग्राम पंचायत - 30 दिसंबर 2009 को तेलाडी गाँव में छतरपुर थाने के ए.एस.आई. भीम महतो पुलिस बल के साथ राजेंद्र यादव के घर में घुसे और सोए हुए राजेंद्र यादव को उनकी पत्नी मन्जू के सामने जबरन उठाकर छतरपुर थाने ले गये। परिजन जब थाने पर पहुंचे तो कहा गया कि राजेंद्र को पूछताछ करके छोड़ दिया जायेगा। अगले दिन दोबारा थाने जाने पर राजेंद्र यादव के पिता से ए.एस.आई. भीम महतो ने 10,000 रुपए की मांग की, जो कि उन्होंने जैसे-तैसे जमा करके पुलिस को दे भी दिए। लेकिन तब उनसे कहा गया कि वे सुबह आकर अपने बेटे को वापस ले जा सकते हैं। अगले दिन कहा गया कि पुलिस अध ीक्षक जतिन नरवाल राजेन्द्र से बात करना चाहते हैं, इसलिए उन्हें एस.पी. के आवास पर बुलाया गया है। जब वे एस.पी. के आवास पहुँचे तो उनसे कहा गया कि राजेन्द्र यादव की तबीयत अचानक खराब हो जाने के कारण उसे अस्पताल भेज दिया गया है। उनके अस्पताल पहुँचने तक राजेन्द्र यादव की मौत हो चुकी थी। पहले पोस्ट-मार्टम में मौत का सही कारण सामने नहीं आ पाया। अस्पताल के डॉक्टरों ने यह रिपोर्ट बनायी कि मौत पेट की बीमारी के कारण हुई है। स्थानीय लोगों के पुरजोर संगठित विरोध के बाद दूसरा पोस्ट-मार्टम रिम्स रांची में कराया गया। जिससे पता चला कि राजेन्द्र की मौत पिटाई के कारण हुई थी। यह रहस्य भी शायद इसलिए खुल पाया कि राजेन्द्र का परिवार खुशहाल मध्यम किसान परिवार है और निकटवर्ती डाल्टनगंज कस्बे से लेकर राजधानी रांची तक उनके संपर्क हैं। दूर-दराज के गाँव के किसी गरीब किसान या मज़दूर के साथ कोई जुल्म हो, तो साधारण मेडिकल प्रमाण-पत्र बनवाना भी इस इलाके में मुमकिन नहीं होता, दुबारा पोस्ट-मॉर्टम करवा पाना तो सोचना भी मुश्किल है। पर राजेन्द्र का परिवार आज भी इंसाफ के लिए लड़ रहा है।

आखिर राजेन्द्र को ही क्यों निशाना बनाया गया? गाँव के लोगों का कहना है कि पुलिस किसी दूसरे राजेन्द्र यादव की तलाश में थी और गलती से उन्हें उठा ले गयी। ग्रामीणों के इस दावे के अलावा इस सवाल का कोई और जवाब नहीं दिखाई देता। मगर यह तथ्य कि दो साल से इस मामले में चल रही उच्चस्तरीय पुलिस जाँच के निष्कर्ष अभी तक सामने नहीं आये हैं, अपने आप में बहुत कुछ बताता है। इस दरमियान राजेन्द्र की पत्नि को मुआवजे के तौर पर सरकारी नौकरी मिल गयी है। पर सरकार दोषी पुलिस अफसरों को सजा देना तो दूर, दोष

संतोष छतरपुर में एक सामाजिक कार्यकर्ता हैं और पीयूसीएल झारखण्ड के सदस्य हैं। राजेन्द्र यादव के मामले में एक सक्रिय भूमिका निभाते हुए इस अन्याय के खिलाफ उन्होंने एक आंदोलन किया। इस आंदोलन का ही प्रभाव था कि राजेन्द्र के शव का दुबारा पोस्टमार्टम संभव हो पाया व उनकी पत्नी को मुआवजा मिला। संतोष दोषी पुलिस कर्मियों व उच्च अधिकारियों को सजा दिलवाने के लिए इस मामले को मानवाधिकार व न्यायपालिका में ले गए। लिहाजा उन्हें थाना प्रभारी छतरपुर के विपिन कुमार व डीएसपी राम प्रसाद सिंह द्वारा लगातार धमकियां दी जा रही हैं। इसके अलावा पुलिस की शह पर तृतीय प्रस्तुती कमिटी (टीपीसी) द्वारा लगातार हत्या की धमकी दी जा रही है। पलामू के एसपी अनूप सिंह से जब इन्होंने अपने संदर्भ में झूठी अखबारी खबर के बाबत शिकायत की तो एसपी का कहना था कि हमने तुम्हारा नाम माओवादियों के साथ इसलिए जोड़ा है ताकि तुम्हारे साथ कुछ भी घटित हो तो हम उस कार्यवाही को सही साबित कर सकें।

स्वीकारने को भी तैयार नहीं है। जतिन नरवाल वर्तमान में गुमला के एस.पी. के पद पर बने हुए हैं। हर साल 1 जनवरी को जब राजेन्द्र की बरसी को शाहादत दिवस के रूप में मनाया जाता है तो उनके परिजनों और मित्रों को तरह-तरह से धमकाया जाता है और कार्यक्रम में अवरोध उत्पन्न किये जाते हैं।

राजेन्द्र की पत्नी मंजू की उम्र अभी तीस के आसपास ही होगी। राजेन्द्र के दो लड़के हैं जिनकी उम्र दस साल से भी कम है। परिवार का एक अहम सदस्य जो कि परिवार की आमदनी में योगदान देता था अब नहीं रहा। उनकी परवरिश का जिम्मा पूरी तरह से अब मंजू पर आ पड़ा है। दोषी पुलिस के विरुद्ध कोई कार्यवाही नहीं हुई है।

दीपक वर्मा नामक तत्कालीन डी.आई.जी. जाँच के दौरान राजेन्द्र के परिवार को खुली धमकी दे चुके हैं कि वे किसी भी पुलिसवाले का कुछ नहीं बिगाड़ पायेंगे, स्पष्ट है कि सत्ताधारियों की शरण लेकर झारखण्ड के पुलिस महकमे के अफसर सरेआम मनमानी पर उतर आये हैं, जिसकी कीमत निर्दोष गाँव वालों को चुकानी पड़ रही है।

यह कहना ज़रूरी है कि हमने जितने मामलों की जाँच की है वे केवल चन्द उदाहरण मात्र ही हैं। पलामू के मुख्यालय डाल्टनगंज और लातेहार मुख्यालय के पत्रकारों और सामाजिक एवं राजनीतिक कार्यकर्ताओं से लेकर गाँव के वंचित मेहनतकशों तक से बातचीत और अर्द्ध-सैनिक बलों की हलचल से हमें ऐसा लगता है कि असलियत इससे कहीं ज़्यादा गंभीर है। हम जहाँ भी जाते थे वहाँ हमें सैन्य बलों के अत्याचारों के कई मामलों के बारे में पता चलता था, पर इन सब घटनाओं की की जाँच करना, समय और संसाधनों की सीमा के कारण संभव नहीं था। इसीलिए हमारी यह धारणा बनी कि यहाँ जिन चंद मामलों का जो ब्यौरा दिया गया है, वह वास्तव में झारखण्ड की वास्तविक स्थिति का परिचायक ही हैं।

इस दौरे के अंत में हमने राजधानी रांची पहुँचकर सबसे पहले शासन का पक्ष सुनने के लिए डीजीपी से समय मांगा, उक्त अधिकारी ने समय देने से इन्कार कर दिया।

भाग दो

सारंडा-पोडैयाहाट

पश्चिम सिंहभूम जिले में एशिया का सबसे बढ़िया साल का जंगल सारंडा में है। सारंडा के जंगल के गाँवों में 'हो' आदिवासियों की बसाहट है। इसकी सीमा से जुड़े पोडैयाहाट इलाके में भी कमोबेश यही स्थिति है। 'हो' जनजाति के लोग ऐतिहासिक रूप से संघर्षरत लोग हैं। उन्नीसवीं शताब्दी में बिरसा मुंडा के साथ इसी 'हो' जनजाति ने अंग्रेजों द्वारा सामंती कृषि प्रणाली को बढ़ावा दिये जाने का विरोध किया था। 1978 में 'हो' जनजाति के लोग वन विभाग के विरुद्ध तब उठ खड़े हुए थे, जब साल के पेड़ों की जगह व्यवसायिक सागवान के पेड़ लगाये जाने का प्रयास हुआ था।

झारखण्ड में ग्रीनहंट की शुरूआत 2009 के मार्च माह से ही शुरू हुई थी। सारंडा में सैन्य बलों ने पिछली बरसात में ऑपरेशन एनाकोंडा चलाया था। यह ऑपरेशन, ग्रीनहंट का ही एक केंद्रीकृत और सघन रूप था। ऐसा माना जाता है कि ऑपरेशन एनाकोंडा का एक बड़ा मकसद सारंडा क्षेत्र में लौह अयस्क के अंधाधुंध दोहन की सारी बाधाओं को हटा देना था।

सारंडा के ग्रामीणों ने बताया कि उस दौरान इस क्षेत्र में 5000 के करीब सैन्य बलों को तैनात किया गया था। सैन्य बलों ने आदिवासियों के घरों और स्कूल पर एक माह तक अपने कैम्प के रूप में कब्जा जमाये रखा। एक महीने तक चले इस सैन्य अभियान में कोई भी महिला सुरक्षाकर्मी शामिल नहीं थीं। इस दौरान कई ग्रामीण गाँवों से बाहर जंगलों की ओर भाग गये और पूरे महीने तक वहीं रहे। ओपरेशन ग्रीनहंट में सैन्य टुकड़ी रोड के रास्ते आ कर दमन कर रात तक वापस चली जाती थी। मगर एनाकोंडा के तहत बड़ी बड़ी टुकड़ियाँ जंगल के रास्ते, बुलेट प्रूफ और लैंड माइन प्रूफ वाहनों में आकर गाँव में ही कैंप लगाती थीं और आतंक मचाती थीं। सारंडा के जंगलों में बसने वाले सभी 36 हजार आदिवासी इस अभियान से किसी न किसी रूप में, किसी न किसी हद तक प्रभावित हुए।

खूंटी और पश्चिम सिंहभूम के कुछ मामलों की पड़ताल

1. गाँव कमाय, ग्राम पंचायत टोमडेल, तहसील गुदरी, उप-मंडल चक्रधरपुर – कमाय गाँव में लगभग 100 मुंडा आदिवासी परिवार रहते हैं। पहाड़ों से घिरे इस गाँव में मूलभूत सुविधाएं अभी भी कोसों दूर हैं। सबसे नज़दीकी स्वास्थ्य केन्द्र 52 कि.मी., हाई स्कूल 12 कि. मी. और इंटर कॉलेज 70 कि.मी. दूर मनोहरपुर में है। आज भी यहाँ बरसात ही सिंचाई का मुख्य स्रोत है।

यह पहली बार था कि कोई मानवाधिकार जाँच दल इस गाँव में पहुँचा। गाँव के एक बूढ़े सेवानिवृत्त शिक्षक, ईसाई पादरी और अन्य ग्रामीणों से हमारी बातचीत हुई। उन्होंने बताया कि पिछले साल से गाँव में सैन्य बलों का आना-जाना बढ़ा है। वे आये दिन मारपीट कर के लोगों को परेशान करते हैं।

जनवरी 2011 में 70 वर्षीय मार्शल भुइयां, उनके 25 वर्षीय पुत्र नेल्सन, 21 वर्षीय पुत्री पिंकी और गाँव के रिश्ते के भाई प्रेमानंद भुइयां को सीआरपीएफ द्वारा बिना कारण बताये उनके घर से गिरफ्तार कर लिया गया। हमें बताया गया कि सीआरपीएफ के तकरीबन 400 जवान अपनी वर्दी की जगह भाकपा (माओवादी) की जन मुक्ति छापामार सेना (पीएलजीए) की वर्दी में आये थे। आते ही उन्होंने पीएलजीए के अंदाज में अभिवादन किया और फिर अचानक किए हमले में घरों में तोड़फोड़ की और तीनों को गिरफ्तार कर लिया।

मार्शल की 19 वर्षीय पुत्री नीलम के अनुसार उनके

परिवार को इसलिए फंसाया गया क्योंकि गाँव में सबसे ज़्यादा धान की पैदावार उन्हीं की ज़मीन पर होती है। उन पर आरोप है कि वे माओवादियों को खाना खिलाते थे और उनके फोन भी चार्ज करते थे। इस शक का आधार केवल यह तथ्य था कि इस घर में सौर ऊर्जा का पैनल और बैटरी लगी है।

हालांकि पिंकी और प्रेमानंद को सितम्बर 2011 में जमानत मिल चुकी है, पर दोनों को ही प्राय: हर महीने चाईबासा अदालत में मुकदमे की सुनवाई के दिन हाजिरी लगाने जाना पड़ता है। इसके अलावा सैन्य बल कभी भी आकर परेशान करते रहते हैं। फरवरी 2012 में उन्होंने पिंका को बेरहमी से पीटा था। जहाँ एक तरफ परिवार के सदस्य जेल में बंद हैं, वहीं दूसरी ओर घर की सारी ज़िम्मेदारी परिवार की महिलाओं पर पड़ गयी है, जो कि अभी भी आतंकित महसूस करती हैं। सीडीआरओ के जाँच दल की गाड़ियों की अवाज से पिंकी की माँ, भय से घर से चली गईं और अगली सुबह हमारे गाँव छोड़ने तक नहीं लौटी। नीलम ने बताया कि वह अक्सर ऐसा करती हैं। 20 मई को जब हम गाँव पहुंचे तब पिंकी चाईबासा कोर्ट तारीख पर गयी हुई थी। लौटकर जब उसने अपने घर के आंगन में 20 लोगों का हुजूम देखा तो वह भौंचक्की रह गयी। वे कुछ देर तक आंगन में खड़े होकर वह चुपचाप हमें घूरती रहीं। नीलम ने पिंकी को समझाया कि हम कौन हैं। पर फिर भी वे रात को खाने व सोने के लिए किसी पड़ोसी के घर चली गयीं। नीलम को अपनी पढ़ाई बीच में ही छोड़नी पड़ी है। मार्शल के पूरे परिवार की सामाजिक, आर्थिक, और मानसिक स्थिति बुरी तरह बिगड़ चुकी है।

2. गाँव पंडुआ, ग्राम पंचायत टोमडेल, तहसील गुदरी, उप-मंडल चक्रधरपुर – पंडुआ गाँव में हमारे जाँच दल के पहुँचने से ठीक एक दिन पहले ही सैन्य बलों द्वारा हमला किया गया था। गाँव वालों के अनुसार 20 मई 2012 की सुबह 5.30 बजे 300-400 की तादाद में आये सैन्य बलों द्वारा तोड़-फोड़, मार-पीट, लूट-पाट और औरतों व बच्चों के साथ बदसलूकी की गयी। लगभग 70 घरों के इस गाँव में टीम को टूटे हुए घर, तोड़ा हुआ सामान, ज़मीन पर गिरी टूटी मोटर साइकिल और लोगों के शरीर पर पिटाई के निशान देखने को मिले।

ग्राम प्रधान जोसफ भेंगरा ने बताया कि 20 मई को सैन्य बलों के आगमन पर डर के मारे कई ग्रामीण जंगल की ओर भागने लगे थे। अपनी बच्ची के साथ बाहर टहल रहे जोसफ से जवानों ने जंगल की ओर भागने वाले लोगों के बारे में जानकारी मांगी। जवानों को शक था कि जंगल की ओर भागने वाले लोग माओवादी हो सकते हैं। जोसफ के यह कहने पर कि भागने वाले लोग गाँव वाले हैं जो पुलिस से भयभीत होकर भागे हैं, उनकी पिटाई की गयी और हाथ बाँध कर घसीटकर ले जाने लगे। जोसफ की पत्नी समेत गाँव की महिलाओं ने विरोध किया, इस पर प्रतिरोध करने वाली महिलाओं को भी पीटा गया। एक महिला के हाथ में उनका बच्चा भी था, उसे भी नहीं बक्शा गया। लेकिन गाँव का यह प्रतिरोध कामयाब रहा। सैन्य बल जोसफ को साथ नहीं ले जा सके।

इसी बीच जोसफ के भाई जॉन के यहाँ भी सिपाहियों ने तोड़-फोड़ की और अनाज एक-दूसरे में मिलाकर नष्ट कर दिया। घर में जमा पैसा भी हड़प लिया। गाँव वालों का कहना है कि सीआरपीएफ के जवानों ने डरे सहमे घरवालों से मुर्गा पकवा कर खाया, शराब पी और गांजे का सेवन भी किया। जाँच दल को घर के बाहर शराब की बोतल भी मिली।

15 वर्षीय मिथुन भुईयां नाम के लड़के की पिटाई की गयी और उसके घर से 10,000 रुपये लूट लिए गए। परिवार ने 7,000 रुपए एक जोड़ा बैल बेचकर जमा किये थे ताकि वे नया जोड़ा खरीद सकें, बाकी 3000 पहले से घर में रखे हुए थे।

बिरथा नाम की वृद्ध महिला ने हमें बताया कि सैन्य बलों ने उनके बेटे हल्लन हूटर के हाथ बांध कर और आँखों पर पट्टी बाँधकर बेरहमी से पीटा और सोदे कैंप ले गए। हमें पता चला कि हल्लन हूटर दरअसल 20 मई की सुबह सोदे के पास पोडैयाहाट का रास्ता दिखाने के लिए हमसे मिलने के लिए निकले थे। लेकिन हमारी तरफ से हुई देरी के कारण उन्हें वापस लौटना पड़ा। अपने गाँव की तरफ लौटते समय ही उनको सैन्य बलों ने पकड़ लिया था। अब गाँव वाले डर रहे हैं कि कहीं

हल्लन को किसी फर्जी मुठभेड़ में मार न दिया जाए। 25 वर्षीय हल्लन के परिवार में माँ के अलावा उनकी पत्नी और 3 साल की बेटी भी हैं।

इसके अलावा स्थानीय चिकित्सक जोसफ कंदूलन की मां 70 वर्षीय रुन्दाय कंदूलन और पिता को बेरहमी से तब तक पीटा गया जब तक वे बेहोश नहीं हो गये। उनके घर से 12,000 रुपए भी चुरा लिए गए। सैन्य बलों ने इस दूरस्थ क्षेत्र में अत्यंत दुलर्भ पैरा डॉक्टर जोसफ को डरा-धमका कर चिकित्सा का काम करने से यह कह कर रोक दिया कि उनकी सेवाओं का लाभ माओवादी उठा सकते हैं।

ओड़ीशा से अपने मामा की शादी में आए हल्लन कुल्लू का ड्राइविंग लाइसेन्स, पहचान पत्र और परीक्षा प्रवेश पत्र फाड़ दिए गए। और उनकी तस्वीर भी खींच कर ले गए।

ग्रामीणों ने बताया कि 10 मई को भी सैन्य बल गाँव पर आ धमके थे, तब भी उन्होंने लोगों को मारा-पीटा और लूटा था। जाँच दल को दौरे के बाद भी खबर मिली कि 24 मई को फिर से इस गाँव पर हमला बोला गया। सीआरपीएफ का यह हमला गाँव वालों पर अपनी यह खीज मिटाने के मकसद से किया गया बताया जाता है कि उन्होंने बाहर से आये सीडीआरओ के जाँच दल को, इतनी सारी जानकारी देने की हिमाकत कैसे की। स्पष्ट है कि यहाँ सैन्य बल अपना मनमाना फौजी शासन चला रहे हैं और खुले तौर पर मानवाधिकारों का बेलगाम हनन करते जा रहे हैं। दो टोलों में बंटे इस 70 घरों के गाँव में 500 जवानों का आना ही अपने आप में एक बड़ी वारदात हो जाती है। जनता में दहशत पैदा करने के लिए इतना ही काफी हो सकता है। इन सैन्य बलों में कभी भी महिला पुलिसकर्मियों को नहीं रखा जाता, और पुरुष पुलिस वालों द्वारा ग्रामीण औरतों व बच्चों के साथ बदसलूकी की जाती है।

3. गाँव बांदू, ग्राम पंचायत बांदू, तहसील गुदरी, उप-मंडल चक्रधरपुर - बांदु गाँव पंडुआ गाँव से बिल्कुल सटा हुआ है। पंडुआ गाँव से लौटते समय जाँच दलयहाँ पहुँचा। वहाँ के निवासी सुखराम ने बताया कि 10 मई को जब सैन्य बल उस क्षेत्र में आये और बांदु गाँव के एक लड़के को पकड़ कर ले गये थे। उसका गुनाह यह था कि वह बाज़ार से एक बड़ी तिरपाल खरीदकर लाया था। ऐसा प्रतीत होता है कि लड़के पर इस आधार पर आरोप लगाया गया कि क्योंकि तिरपालों का प्रयोग माओवादी जंगलों में अपने आश्रय के लिए करते हैं, और वह उन्हीं के लिए तिरपाल लाया होगा। इसके अलावा इस उसे पकड़े जाने के पीछे कोई और ठोस वजह दिखाई नहीं देती। स्पष्ट है कि ग्रामीणो के रोज़मर्रा के हर छोटे-बड़े काम पर नज़र रखी जा रही है। कब कौन सा काम सैन्य बलों के शक के दायरे में आ जाये और कौन कब शिकंजे में फंस जाये, कुछ कहा नहीं जा सकता।

4. गाँव थोलकोबाद, ग्राम पंचायत दीघा, तहसील मनोहरपुर, उप-मंडल चक्रधरपुर - इस गाँव किसी भी तरह की सरकारी सुविधाएं मौजूद नहीं हैं। अस्पताल, स्कूल, राशन की दुकान, बाज़ार आदि गाँव से मीलों दूर हैं। सबसे नजदीकी अस्पताल 30 कि.मी. दूर किरीबुरु में, राशन की दुकान 15-16 कि.मी. दूर दीघा में और बाज़ार 13 कि.मी. दूर करमपदा में है। खेती के लिए पानी की सुविधा नहीं है। नरेगा के तहत बीते साल एक तालाब बना था जिसके पैसे अभी तक नहीं मिले हैं। अब फिर उसी तालाब की मरम्मत हो रही है और मजदूरी मिलने की कोई उम्मीद नहीं है। विकास के नाम पर भी सिर्फ खनन और सड़कों की ही बात हो रही है। ग्रामीणों ने बताया कि यहाँ कुछ-एक सर्वे किये गये थे। एक सर्वे 2009-10 में किसी कंपनी ने किया (सर्वे किस लिए किया गया, गाँववाले नहीं बता पाये)। दूसरा सर्वे सीआरपीएफ ने मानपुरसे थोलकोबाद होते हुए जरैकेला तक सड़क बनाने के लिए किया। दिनसुमबुरु में खनन शुरू किया गया था, लेकिन माओवादियों ने प्रतिरोध के ज़रिये इसे रूकवा दिया था।

गाँव के लोगों ने बताया कि 31 जुलाई 2011 को सैन्य बलों ने गाँव में एक ऑपरेशन शुरू किया था, जिसके तहत लगभग 500 सैनिकों ने पूरे एक महीने तक गाँव को अपने कब्जे में रखा। सैन्य बलों के आने की खबर पाकर अधिकतर गाँव वाले अपना घर और सामान छोड़ कर भाग गए थे। कुछ लोग जंगल की ओर तो कुछ

दूसरे गाँवों में अपने रिश्तेदारों के पास चले गए थे। जो गाँव में रह गए उन्हें एक महीने तक सेना के क्रूर अत्याचारों का शिकार होना पड़ा। घरों की तोड़-फोड़, अनाज और खेती की तबाही, मुर्गे, बकरी व रुपयों, आदि की लूट-पाट तो हुई ही, साथ ही लोगों की बेरहमी से पिटाई भी की गई।

बूढ़े, बच्चे, महिलाएं और पुरुष, सभी की पिटाई की गई। 65 वर्षीय एतवा नाग और उनकी पत्नी को 3-4 सैनिकों ने मिलकर इतनी लातें और घूंसे मारे कि एतवा के शरीर का बांया हिस्सा अब काम ही नहीं करता। 60 वर्षीय गुमिदा होनहांगा को भी पीटा गया और जेल में डाल दिया गया। 50 वर्षीय पांडा पूर्ती को बाज़ार जाते समय पकड़कर जेल में डाल दिया गया। इसी तरह जमुई बुरू गाँव के बिरसा तोरकोड़े को भी इसी गाँव से पकड़कर जेल में बंद कर दिया गया। ये सब अभी तक रिहा नहीं हुए हैं। इतना ही नहीं, ग्राम प्रधान गंगा राम होनहंगा के पिता जर्दा होनहंगा को इतना पीटा गया कि अस्पताल में इलाज के दौरान उनकी मौत हो गई।

50 वर्षीय रमेश सोया के पूरे परिवार को बहुत परेशान किया गया। रमेश के साथ साथ उनके 18 वर्षीय पुत्र मुन्ना को पेड़ से उल्टा लटकाकर पीटा गया। उनकी पत्नी पराई सोया की छाती पर चाकू से प्रहार किया गया जिसका निशान आज भी बना हुआ है। उनकी एक छोटी परचून की गुमटी को भी तोड़ दिया गया। इसके बाद रमेश और मुन्ना को हैलिकॉप्टर से रांची ले जाया गया। तिरिलपोसी गाँव से आये हुए रमेश के23 वर्षीय साले कुज़्रू गगई को भी जेल में बंद कर दिया गया। रमेश और उनके पुत्र को बाद में छोड़ दिया गया, पर उनका साला अब भी जेल में ही है।

गाँव में जो स्कूल था वह ऑपरेशन एनाकोंडा द्वारा ध्वस्त कर दिया गया है। जो पैरा-अध्यापक यहाँ पढ़ा रहे थे, उन्हें भी पीटा गया, जिसके बाद उन्होंने डर के मारे यहाँ आना ही बंद कर दिया है। सैन्य बल स्कूल की टूटी-फूटी दीवारों पर चित्र और अक्षर बना गये हैं। काले अक्षरों में लिखा है - 'ऑपरेशन कोबरा तेरा बाप!' बगल में बन्दूक का चित्र है।

एक महीने बाद जब सैन्य बल चले गये, तो भयभीत ग्रामीण वापस लौट आये। अपने घरों को लुटा हुआ और पीछे छूट गये गाँववासियों को सदमे में पाया। आर्थिक, सामाजिक, मानसिक तौर पर बर्बाद हो चुके इन ग्रामीणों की आज तक कहीं कोई सुनवाई नहीं हुई है।

इतना कोहराम मचाने के बाद इस साल अप्रैल में सैन्य बल फिर से गाँव में आये। इस बार कपड़े, बर्तन, सौर-लैम्प, सिलाई मशीन, मच्छरदानी, आदि बांटने के लिए। जो कि सीआरपीफ के सिविक एक्शन प्रोग्राम के तहत ग्रामीणों में सुरक्षा बलों के प्रति विश्वास पैदा करने के लिए किया गया था। मुंडा और हो जनजाति के 53 परिवारों में से सिर्फ 5 या 6 परिवारों को ही यह सब दिया गया। लोगों ने यह भी बताया कि बांटा गया सामान बेहद घटिया था। साड़ियाँ और धोतियाँ बहुत जल्दी ही फट गईं और सौर यंत्र खराब हो गए। यह एक विडंबना ही है कि पहले सैन्य बलों के बर्बर दमनकारी ऑपरेशन के ज़रिये ग्रामीणों को आर्थिक रूप से तबाह कर दिया गया और उसके बाद जले पर नमक छिड़कने के लिए यह सामान बांटा गया।

गाँव पर आयी इस भयानक विपदा में भी वहाँ के लोगों के बीच आपसी सहयोग के जो इक्का-दुक्का उदाहरण मिले वे नायाब हैं। गाँव का स्कूल ध्वस्त कर दिए जाने पर सबसे नज़दीकी स्कूल अब 40 कि.मी. दूर मनोहरपुर में ही है। मगर गाँव ही के ज़्यादा पढ़े-लिखे बच्चे दूसरे कम पढ़े-लिखे हुए बच्चों को पढ़ा रहे हैं। सिंचाई के साधनों के अभाव को कम करने के लिए छोटे-छोटे तालाबों में पानी इक्ट्ठा करके खेतों तक कच्ची नहर निकाली गयी है। हमें मई की गर्मी में धान की फसल उगती हुई दिखायी दी। अपने को आर्थिक और शैक्षिक दुर्दशा से उबारने के लिए ये अतिरिक्त प्रयास जो लोग अपने आप कर रहे हैं, यह उनके अंदर अपनी स्वायत्तशासी सत्ता और अपनी ज़रूरत के अनुसार विकास करने के बोध को दर्शाता है।

जब हमने गाँववालों से माओवादियों के बर्ताव के बारे में पूछा, तो सरकार द्वारा बनायी गयी छवि से बिल्कुल अलग ही सुनने को मिला। ग्रामीणों ने हिचककर बताया कि माओवादी गाँव से कभी-कभी गुजरते हैं। ज़्यादा से ज़्यादा पानी या बासी भात मांगकर चले जाते हैं,

लेकिन उन्होंने कभी भी किसी के साथ मारपीट, लूटपाट या औरतों के साथ बुरा बर्ताव नहीं किया। और तो और माओवादियों ने सैन्य बलों के भय से जंगल की ओर भागने वाले ग्रामीणों की मदद ही की।

5. गाँव तिरिलपोसी, ग्राम पंचायत दीघा, तहसील मनोहरपुर, उप-मंडल चक्रधरपुर – 3 अगस्त 2011 को सैकड़ों की तादाद में सीआरपीएफ के जवानों की बटालियन का यहाँ हमला हुआ। जो कोई गाँव से भाग नहीं पाया उसे पकड़-पकड़ कर पीटा और धमकाया गया। कुछ घरों को भी जला दिया गया और घरों में रखी सिलाई मशीनों को भी तोड़ दिया गया। महिलाओं के साथ बदसलूकी की गयी। पूरे एक महीने तक इसी गाँव के स्कूल में डेरा डाले हुए सैन्य बल ने लगातार उन पर तरह-तरह के अत्याचार किये।

एक वाक्य में कहें तो 3 अगस्त से लेकर 3 सितम्बर 2011 तक यहाँ के आदिवासियों को अपने ही गाँव में बंधक बनाकर रखा गया। इस दौरान उनके साथ हुए हादसे कुछ इस प्रकार हैं :-

इस एक महीने के दौरान हर शाम को गाँव के सभी पुरुषों को हाजिरी के लिए बुलाया जाता था और फिर एक घर में इक्ट्ठा करके तालाबंद कर दिया जाता था। कोई देरी से आता तो उसे पेड़ पर उलटा लटकाकर पीटा जाता। शाम को कमरे में बंद कर देने के बाद किसी को भी पेशाब तक करने के लिए बाहर नहीं छोड़ा जाता था। औरतों द्वारा कामकाज को लेकर हंगामा करने पर सुबह काफी देर बाद उन्हें बाहर आने दिया जाता था।

रात को सभी औरतें अपनी सुरक्षा के लिए एक साथ सोती थीं। औरतों के साथ हुए शारीरिक शोषण के बारे में जाँच दल द्वारा पूछने पर ग्रामीणों से एक ही जवाब मिला वह था गहरी चुप्पी। और फिर बात को टालने का प्रयास। इस चुप्पी के पीछे छुपी आवाज़ झारखण्ड मानवाधिकार आंदोलन द्वारा सितम्बर 2011 में तिरिलपोसी में किये गये दौरे से सामने आती है। उनकी रिपोर्ट में यह दावा किया गया है कि एक महिला के साथ लगातार 5 दिनों तक उसी के घर में बलात्कार किया गया। रिपोर्ट में लिखा है कि चूँकि इस महिला का बेटा जेल में कैद है, इसीलिए भय के चलते इन्होंने खुलकर किसी से इस बारे में शिकायत नहीं की। लेकिन समय की कमी के कारण हमारे लिए इस हादसे की पुष्टि कर पाना संभव नहीं हुआ।

महीन भर तक गाँव के आदमियों को रात रात भर कमरे में बंद रख जाने, महिलाओं और बच्चों के इर्द-गिर्द हथियारबंद और बेलगाम सैन्य बल की गाँव में उपस्थिति, जिसमें महिला जवान शामिल न हों, की इन घटनाओं के बारे में पहले कभी किसी को इसलिए पता नहीं चला। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि झारखण्ड मानवाधिकार आंदोलन की पहल पर ऑपरेशन एनाकोंडा के बाद राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के जिस दल ने इस क्षेत्र में दौरा किया था, उसे सैन्य बल ने तिरिलपोसी गाँव में प्रवेश करने ही नहीं दिया।

इस गाँव में बड़े पैमाने पर गिरफ़्तारियाँ की गयी हैं। कुल 17 लोग आज भी चाईबासा जेल में हैं। एक चार्जशीट से हमें पता लगा कि इन पर संगीन किस्म के आरोप थोप दिये गये हैं। यू.ए.पी.ए., आर्म्स एक्ट, क्रिमिनल लॉ अमेंडमेंट एक्ट से लेकर आई.पी.सी. की अनेक संगीन धाराओं तक के अन्तर्गत मुक़दमे दायर किये गये हैं। तमाम परिजनों का कहना है कि किसी को कुछ भी नहीं मालूम कि किस जुर्म में ये गिरफ्तारियाँ हुई हैं। जेल में बंद ग्रामीणों में रमेश गगरई, हिंदू गगरई, नंदू सोढ़ी, दोर्सोना बोदरा, कजुरी गगरई, एक और कजुरी गगरई, सुरेश गुरिया, बंडू सोई, राजू गुरिया, नार्कान बारी, रमेश चिख्वा, सोमा तोर्पोद, विजय गगरई शामिल हैं। ऐसे ही सारंडा के कुछ दूसरे गाँवों से भी गिरफ्तार हुए लोग चाईबासा जेल में किसी भी तरह की क़ानूनी जानकारी या सहायता के बिना पिछले 10 महीनों से बंद पड़े हैं।

तिरिलपोसी में इसके अलावा सुकुर्मुनी गुरिया समेत 5 लोगों के घर तोड़ दिये गये। इनमें से एक घर में कुछ सिलाई मशीन व कपड़े मिले बताये जाते हैं, जो कि संभवत: माओवादियों के लिए सिले गये थे। जिस भी घर में सिलाई मशीन मिली उसे जला दिया गया। 34 वर्षीय सुद्रोद्रा की दुकान को भी तोड़ डाला गया। तोड़ने से पहले उसमें से 50,000 रु. का सामान और 4,000 रु.

नगद हड़प लिये गये।

6. गाँव दीघा राईडीह, ग्राम पंचायत दीघा, तहसील मनोहरपुर, उप-मंडल चक्रधरपुर – तिरिलपोसी की तरह इस गाँव में भी 2011 में एक महीने तक सैन्य बलों ने स्कूल में अपना डेरा लगाया था। रोज़ रात को पुरुषों को बंदी बना लिया जाता था और महिलाओं को अलग ठहराया जाता था। उस महीने स्कूल भी बंद था। जब जाँच दल का एक हिस्सा प्रधान डेनिस टोप्पो से मिला, तो दूसरे ग्रामीणों के विपरीत उन्होंने कहा कि सैन्य बल आये ज़रूर थे, पर उनके द्वारा गाँव में किसी को परेशान नहीं किया गया। थोड़ा और कुरेदने पर पता चला कि कुछ वर्षों पहले इन्हीं प्रधान को माओवादी होने के आरोप में सेना के जवानों द्वारा पानी में डुबा-डुबा कर पीटा गया था। ऐसा प्रतीत होता है कि पुलिस ने दमन और लालच दोनों हथकंडे अपनाकर प्रधान को चुप करा दिया है।

दीघा में भी बर्तन, कपड़े, मच्छरदानियाँ आदि बाँटी गयी हैं और फिर स्वयं केन्द्रीय ग्रामीण विकास मंत्री श्री जयराम रमेश यहाँ आकर ग्रामीणों की अर्जी पर 2 चेक डैम बनवाने का काम शुरू करवा गये हैं। 28 लाख के खर्चे के साथ चेक डैम का निर्माण कार्य तो शुरू हो चुका है, पर इसमें भी कुछ कमियाँ पायी गयी हैं। पहली बात तो इंटीग्रेटिड एक्शन प्लान (आई.ए.पी.) के तहत बन रहे इन डैमों का ज़िम्मा जमशेदपुर के एक ठेकेदार राजू - (माँ शेरावाली कंस्ट्रक्शन्स) के मालिक को दिया गया है। जबकि आई.ए.पी. के नियमों के तहत यह ठेका किसी क्षेत्रीय व्यक्ति को ही दिया जाना अनिवार्य है। फिर जिस तरीके से ये डैम बनाये जा रहे हैं, मॉडल वह पूरे देश में विफल सिद्ध हो चुका है। इनमें कोई गेट नहीं बनाया जा रहा है, जिसके कारण निर्माण के 5 सालों में इसमें बालू भर जाने की प्रबल सम्भावना है और फिर इसकी सफाई के लिए लाखों रुपये लग जायेंगे, स्पष्ट तौर से यह योजना गाँव के चेक डैम को घपलेबाजों और ठेकेदारों के लिए दुधारू गाय बना देने की है।

यहाँ के लिए सबसे नज़दीकी अस्पताल ओड़ीसा के राउरकेला में पड़ता है। गाँववालों ने बताया कि पिछले एक साल से लगातार हर हफ्ते कुछ स्वास्थ्य सुविधाएँ उन्हें मुहैय्या करायी जा रही है, जैसे दवाइयाँ, नर्स आदि। ग्राम प्रधान डेनिस टोप्पो ने बताया कि सेल कंपनी के चिरिया माइनस द्वारा ये सुविधाएँ सामाजिक कल्याण कार्य के तौर पर उपलब्ध करायी जा रही हैं। इस तथ्य को दो तरह से देख जा सकता है। खनन कर रही एक बड़ी कम्पनी द्वारा सुविधाएँ देने के रूप में या फिर देशभर में मूल सुविधाएँ (जैसे-शिक्षा, स्वास्थ्य) मुहैय्या कराने में सरकार की घटती और कम्पनियों की बढ़ती भूमिका के रूप में।

कुछ निष्कर्ष

सुरक्षा बलों के आगमन के बाद, खास कर ऑपरेशन ग्रीनहंट शुरू होने के समय से झारखण्ड में दमन में अत्यधिक बढ़ोतरी हुई है। यहाँ के आदिवासियों का सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक अस्तित्व आज खतरे में पड़ गया है। प्रतिरोध में खड़े किसान-मज़दूर वर्ग के सामने इस परिस्थिति से मुक्त होने के लिए जुझारू संघर्षों के अलावा कोई और रास्ता नहीं दिखाई दे रहा है।

हमारी जाँच पड़ताल से जो मुद्दे उभर कर आए हैं, उनका एक संक्षिप्त विवरण आगे दिया जा रहा है।

1. ज़मीन से बेदखली –

भूमि न सिर्फ आर्थिक तौर पर सुरक्षा प्रदान करती है, बल्कि यह सामाजिक सुरक्षा का भी स्त्रोत होती है। झारखंड के लोगों के लिए तो यह और भी खास है, क्योंकि यह उन ऐतिहासिक संघर्षों का प्रतीक है, जो झारखंड में भूमि के हक के लिए बिरसा-मुंडा और नीलाम्बर-पीताम्बर के समय से लेकर आज तक उभरते रहे हैं।

झारखण्ड के पाँच जिलों के दौरे के बाद जाँच दल को महसूस हुआ कि भूमि पर निर्भर लोगों को अलग-अलग तरीके से अपनी ज़मीन से बेदखल किया जा रहा है। बलीगढ़ और होमिया गाँव में एस्सार और जिंदल कम्पनियों को फर्ज़ी तरीके से ज़मीन बेचे जाने से यह साफ़ है कि जिस ज़मीन का हस्तांतरण कानूनी रूप से नहीं हो सकता, और जिस पर स्थानीय लोगों का मालिकाना अधिकार है, उसी ज़मीन को गाँववालों की जानकारी के बगैर

इन बड़ी कंपनियों को दिया जा रहा है। इस अवैध हस्तांतरण के खिलाफ कार्यवाही करने की जगह प्रशासन ज़मीन के असली मालिक ग्रामीणों को ही प्रताड़ित कर रहा है। कोमिकोला गाँव में बाज़ार की ज़मीन की अवैध तरीके से बिक्री का विरोध करने वाले स्थानीय लोगों के नेताओं को माओवादी समर्थक बता कर जेल भेज दिया गया। इसी तरह सान्या गाँववासियों द्वारा कुटकु बांध के खिलाफ चलाए जा रहे संघर्ष को कई वर्षों से दबाने की कोशिश की जा रही है। आज भी इस गाँव का हर व्यक्ति भय में जीता है, क्योंकि सीआरपीएफ द्वारा यहाँ के लोगों को परेशान किया जा रहा है।

बहेराटाड़ गाँव में आदि जनजातियों के इस गाँव में हर व्यक्ति 'मुंडारी खुंटकट्टीदार' है। यानी इनके पूर्वजों ने खुद अपने हाथों से यहाँ के जंगलों की कटाई की थी और तब से ज़मीन की देखरेख बाकी पीढ़ियाँ करती रही हैं। इस तरह के गाँव में ज़मीन के इस्तेमाल का हक किसी एक व्यक्ति के पास न होकर सामूहिक तौर पर पूरे गाँव का होता है। और सरकार तो क्या, गाँववालों को खुद भी ज़मीन किसी और के नाम करने का हक नहीं होता। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि सरकार को मुंडारी खुंटकट्टीदार गाँव के लोगों से लगान वसूलने का कोई अधिकार नहीं होता। इनसे सिर्फ चंदा ही लिया जा सकता है। पर बहेराटाड़ के गाँववासियों से आज की तारीख में सरकार लगान वसूल रही है, जिसकी रसीद जाँच दल ने भी देखी। ज़ाहिर है गाँववालों को क़ानून की पूरी जानकारी नहीं है जिसके कारण वे समझ नहीं पा रहे हैं कि वे इस ज़मीन को इस्तेमाल करने का लगान उन्हें नहीं देना है, और कानून के मुताबिक़ उनके पास ज़मीन का मालिकाना हक है। ज़ाहिर है कि इस तरह कितने ही गाँवों में सरकार ग्रामीणों को धोखे में रख रही होगी।

झारखण्ड में संवैधानिक तौर पर आदिवासियों को भूमि सुरक्षा प्रदान की गयी है। भारतीय संविधान कि पांचवीं अनुसूची (धारा-2) के अनुसार राज्यपाल को हक है कि वह आदिवासी ज़मीन का हस्तांतरण व नियंत्रित कर सके या उस पर रोक लगा सके। इसके अलावा झारखण्ड में ऐसे कई क़ानून हैं जो खास भूमि सुरक्षा पर ही केन्द्रित हैं। इनमें से सबसे महत्वपूर्ण हैं छोटा नागपुर काश्तकारी क़ानून (सी.एन.टी.एक्ट),1908 और संथाल परगना काश्तकारी क़ानून (एस.पी.टी. एक्ट) 1949. छोटा नागपुर काश्तकारी क़ानून झारखण्ड के 24 में से 19 जिलों में लागू है जिनमें गढ़वा, पलामू, पश्चिमी सिंहभूम, खुंटी और लातेहार शामिल हैं।

सी.एन.टी. एक्ट 1908 की धारा (ए) के तहत आदिवासी की ज़मीन सिर्फ उसी थाना क्षेत्र के अंतर्गत रहने वाले किसी दूसरे आदिवासी को ही बेची जा सकती है और वह भी केवल उपायुक्त की अनुमति से। 1908 में जब यह क़ानून बना था जब ज़मीन की बिक्री बिल्कुल संभव नहीं थी। लेकिन समय के साथ इसमें संशोधन कर दिये गये। धारा 49 के तहत गैर-आदिवासियों को 'सार्वजनिक उद्देश्यों' के लिए ही ज़मीन बेची जा सकती है। 1996 में हुए एक संशोधन के बाद से 'सार्वजनिक उद्देश्यों' की सूची में से धार्मिक, शिक्षा-सम्बन्धी, आदि तो हटा दिए गए परन्तु खनन और अन्य औद्योगिक कार्य इसमें शामिल हैं।

आज फिर समाज का एक तबका यह मांग कर रहा है कि धारा 49 में संशोधन किये जायें। ज़ाहिर है कि एक बार फिर आदिवासियों को आशंका है कि ज़मीन की खरीद फरोक्त की प्रक्रिया इससे तेज़ होगी और इसका लाभ बिचौलियों और उद्योगपतियों को ही मिलेगा। सी. एन.टी. एक्ट में संशोधन, सीआरपीएफ के कैम्प स्थापित करने के लिए ज़मीन दखल की कानूनी अड़चनों को दूर करने में भी सहायक हो सकता है।

2. जीविका पर आंच -

झारखण्ड में 60% आबादी अपने जीवन पोषण के लिए खेती-बाड़ी और बाकी वनोपज जैसे लकड़ी, महुआ, तेंदू पत्ता, कंदमूल फल, चिरौंजी, लाह, क्योंदी, शहतूत, साल बीज, मधु और साथ ही खाद्य साग जैसे चकोद, कटाई, सरला और अन्य औषधीय पौधों आदि पर निर्भर हैं। जिन गाँव में टीम ने दौरा किया वहाँ लोगों ने हमें बताया कि सीआरपीएफ के ऑपरेशनों के दौरान आदिवासियों का जंगल में जाना मुश्किल हो जाता है। जब लूकस मिंज जैसे मूक व बधिर व्यक्ति को गाय-भैंस चराते वक्त मारा जा सकता है, जब उसी के गाँव की दो नाबालिक

लड़कियों को सीआरपीएफ द्वारा रात भर बिना किसी महिला पुलिसकर्मी की मौजूदगी में अपने कैंप में रखा जा सकता है, तो ऐसे माहौल में गाँव वाले अपने आप को असुरक्षित महसूस करें तो कोई हैरानी की बात नहीं है। इन खतरों के चलते झारखंड में आदिवासी औरतों के कामकाज पर भी असर पड़ रहा है। बलीगढ़ और लादी गाँवों में ग्रामीणों ने बताया कि उन्हें नरेगा की मज़दूरी का भी भुगतान कई महीनों से नहीं हुआ है। ऐसे में गाँव के कई लोग पलायन कर अपना परिवार चलाने को विवश हो रहे हैं।

3. इंटिग्रेटिड ऐक्शन प्लान और सिविक एक्शन प्लान का मतलब –

2010 में केन्द्रीय सरकार द्वारा देश के 60 चुनिन्दा आदिवासी और पिछड़े जिलों में इंटिग्रेटिड ऐक्शन प्लान शुरू किया गया। इस कार्यक्रम के तहत 2011 में देशभर में साठ नक्सल प्रभावित जिलों में विकास कार्यों के लिए सरकार ने सालाना प्रति जिला 55 करोड़ रुपये आबंटित किए थे। यह धनराशि स्वास्थ्य सेवाओं, पीने के पानी, शिक्षा, सड़क निर्माण आदि के लिए दी जाती है। पर जाँच के दौरान मिले स्थानीय पत्रकारों ने बताया कि किस तरह इस धनराशि का दुरुपयोग भी हो रहा है। उदाहरण के लिए पलामू जिसे के डाल्टन गंज के टाऊन हॉल की मरम्मत-सजावट तक के लिए इस पैसे का इस्तेमाल किया गया है। एक तालाब को दो बार खुदवाया गया जिसमें 70 लाख रुपये खर्च हुए। इसके अलावा जिन गाँवों में जाँच दल गया वहाँ हमें विकास के कोई खास चिन्ह नहीं दिखाई दिए। उदाहरण के तौर पर नवरनागू गाँव तक जाने के लिए करमडीह से 2 किलोमीटर पैदल चलना पड़ता है। इस गाँव के लोगों को गाँव से बाज़ार तक पहुँचने के लिए कम से कम 8 किलोमीटर कच्चे और पथरीले रास्ते पर चलना पड़ता है।

इसके अलावा सीआरपीएफ द्वारा 'सिविक एक्शन प्लान' के तहत कुछ ग्रामीणों को कपड़े, किताबें, कम्बल, खाना आदि भी बांटे गये। इनका कहना है कि इससे वे ग्रामीणों का दर्द बाँटना और उन तक दोस्ती का हाथ बढ़ाना चाहते हैं। जाँच दल ने बरगढ़ ग्राम पंचायत में सीआरपीएफ द्वारा निर्मित विश्राम घर भी देखा। हाल ही में 'परिवर्तन' नाम का एक और अभियान शुरू किया गया है, जिसके तहत सीआरपीएफ आदिवासी लड़कियों को रोज़गार देने के मकसद से सुरक्षा गार्ड का प्रशिक्षण देती है। यह अपने आप में सरकार द्वारा किया जा रहा एक भद्दा मजाक है कि जो सैन्य बल यहाँ की महिलाओं को प्रताड़ित करते हैं और जीविकोपार्जन के लिए भी असुरक्षा पैदा करते हैं, वे ही महिलाओं को प्रशिक्षित करने की पेशकश कर रहे हैं।

4. इन्साफ से वंचित जनता –

इस पूरी तबाही और प्रताड़ना की प्रक्रिया में इंसाफ बहुत पीछे कहीं छूट गया है। सुरक्षा बलों द्वारा जिन हत्याओं की परोक्ष रूप से पुष्टि करते हुए मुआवजा तक दिया जा चुका है, उन मामलों तक में अभी तक कोई सजा नहीं हुई है। तेलाड़ी छतरपुर के राजेन्द्र यादव, जिनकी हत्या तत्कालीन एस.पी. जतिन नरवाल की मौजूदगी में उनके आवास पर पीट-पीट कर हुई, उनकी पत्नी मंजू को मुआवजा और नौकरी दे दी गयी, पर अभी तक यह तय नहीं किया गया है कि इस हत्या का दोषी कौन है। राजेन्द्र के मित्र संतोष लगातार इस मामले को लेकर संवैधानिक लड़ाई लड़ रहे हैं, और इसके लिए उन्हें एस. पी. जतिन नरवाल और गुंडा गिरोह, तृतीय प्रस्तुति कमेटी (टी.पी.सी.) की तरफ से धमकियाँ मिलती रही हैं। उन्हें लगातार माओवादी घोषित किये जाने का प्रयास किया जाता है। लादी गाँव की जसिन्ता देवी के घर वालों को भी मुआवजा तो दिया गया पर उनकी हत्या का दोषी कौन है इसका कोई पता नहीं चला, न ही किसी को कोई सजा हुई। गाँव के कई ऐसे मामले हैं जिनकी थाने में प्राथमिकी तक दर्ज नहीं की गई। आखिर जब राज्य अपने किये हुए गुनाहों पर मुआवजा दे रहा हो, तो निश्चित ही इसका कोई दोषी भी तय होना चाहिए। ऐसा कोई मामला हमारी जाँच के दौरान नहीं सामने आया, जहाँ किसी भी सैन्य बल के सदस्य को उसके द्वारा किए गए गुनाह की सजा मिली हो। यानी कि जिंदगी की कीमतों को रुपयों से चुकाया जा रहा है। इन इलाकों के बच्चे स्कूलों में सैन्य कैंप होने की वजह से या स्कूल के आसपास सैन्य

कैंप होने पर डर के कारण स्कूल नहीं जा पाते हैं, आखिर इसकी भरपाई कौन करेगा? निश्चित तौर पर इन स्थितियों में राज्य के न्याय से लोगों का विश्वास उठता जाएगा और यह लगातार उठता भी जा रहा है।

5. फर्जी नक्सली संगठन –

जाँच के दौरान टीम की अकस्मात मुलाकात माओवादियों के कुछ नेताओं के साथ हुई। बातचीत में उन्होंने कहा कि हमारे जाँच दल को कुछ ऐसे संगठनों के बारे में भी जाँच करनी चाहिए, जिन्हें मीडिया और पुलिस वाले नक्सली बताते हैं। उन्होंने टी.पी.सी. (तृतीय प्रस्तुति कमेटी), जे.पी.सी. (झारखंड प्रस्तुति कमेटी), पी.एल.एफ.आई. (पीपुल्स लिबरेशन फ्रंट ऑफ इंडिया), जे.जे.एम.पी. (झारखंड जनमुक्ति परिषद), जे.एल.टी. (झारखंड लिबरेशन टाइगर) जैसे संगठनों के नाम लिए जिन्हें उनके मुताबिक राज्य का संरक्षण प्राप्त है।

2003–2004 की गृह मंत्रलय की वार्षिक रिपोर्ट में कहा गया है कि ऐसे लोगों को जो नक्सल विरोधी हैं नक्सलियों ने निपटने के लिए इस्तेमाल करने की ज़रूरत है। और इसीलिए इस रिपोर्ट में राज्यों से विशेष पुलिस अफसर बनाने, और नागरिक सुरक्षा समितियों के निर्माण पर ज़ोर दिया गया है, जो कि माओवादियों से मुकाबला कर सकें। सीडीआरओ के सदस्य संगठनों का भी पिछले कई दशकों का अनुभव है कि उत्तर पूर्व और जम्मू कश्मीर जैसे इलाकों में भी इस तरह की रणनीति अपनाई गई थी, जिसके तहत राज्य, अपने संरक्षण में लड़ाकू समूह खड़े करता था और फिर इनका इस्तेमाल करके खून खराबे के ज़्यादातर मामलों को उग्रवादियों की आपसी झड़पें करार कर देता था। इस लिए यह कोई असामान्य बात नहीं है कि झारखंड में भी ऐसे संगठन खड़े किए जा रहे हों।

जाँच दल इस बारे में कोई विशेष जाँच पड़ताल नहीं कर पाया। परन्तु हम इसकी ज़रूरत महसूस करते हैं क्योंकि आपराधिक या आसामाजिक गुटों को राजकीय संरक्षण देना न केवल नक्सलियों को बदनाम करने के लिए है बल्कि इससे अराजकता फैलने का भी डर रहता है जैसा कि छत्तीसगढ़, कश्मीर और आसाम में देखा जा चुका है।

इसी संदर्भ में माओवादियों द्वारा हाल ही में टी.पी.सी. (तृतीय प्रस्तुति कमेटी), जे.पी.सी. (झारखंड प्रस्तुति कमेटी), पी.एल.एफ.आई. (पीपुल्स लिबरेशन फ्रंट ऑफ इंडिया), जे.जे.एम.पी. (झारखंड जनमुक्ति परिषद), जे.एल.टी. (झारखंड लिबरेशन टाइगर) के साथ इकतरफा युद्ध विराम की घोषणा की गई। हमारी नज़र में यह एक सराहनीय कदम है। क्योंकि अगर ये संगठन वाकई जनता के पक्ष में खड़े हैं और सुरक्षा बलों के संरक्षण में नहीं पनप रहे हैं तो उन्हें इस युद्ध विराम से कोई एतराज नहीं होना चाहिए। माओवादियों की अपील में यह भी कहा गया था कि ये संगठन अगर वाकई जनता का भला चाहते हैं तो फिर इन्हें जनविरोधी नीतियों के खिलाफ लामबंद होने के लिए आगे बढ़ना चाहिए।

6. वैद्य कार्यकलाप –

माओवादी नेताओं ने हमें जो बताया उसके अनुसार लातेहार–गढ़वा–पलामू क्षेत्र में वे अपनी गाँव स्तर की क्रांतिकारी किसान कमेटियों के माध्यम से छिटपुट और अनियोजित रूप से विकास कार्यों को अंजाम देते थे और जनता की छोटी मोटी समस्यों का निदान करते थे। गाँव वालों के अनुसार भी इन समितियों की उपस्थिति से उन्हें काफी मदद मिलती थी। इस बात का सबूत नेशनल इंस्टीटयूट ऑफ रूरल मैनेजमैंट आनंद 2011 की रिपोर्ट के एक अध्याय में भी मिलता है, जिसमें माओवादी/नक्सल संगठनों द्वारा सरकारी कल्याणकारी योजनाओं के समर्थन का उल्लेख है। यह अलग बात है कि उस अध्याय को ग्रामीण विकास मंत्रलय ने दबा दिया। इसी तरह नेशनल काउंसिल फॉर प्रोटेक्शन ऑफ़ चाइल्ड राइट्स की 2010 की वार्षिक रिपोर्ट की शुरूआत ही इस बात से होती है कि झारखंड में माओवादी संगठनों के प्रयास के कारण ही वे राजकीय स्कूल जिन्हें प्रशासन ने बंद करा हुआ था, दोबारा खुल सके।

सीडीआरओ ने वक्त वक्त पर इस बात की तरफ ज़ोर दिया है कि संगठनों को प्रतिबंधित करना और उनके कार्यकर्ताओं एवं सहयोगियों को इस बहाने अपराधी घोषित करना अपने आप मे एक जघन्य और निरंकुश

राजनीति है। इसलिए सीडीआरओ का मानना है कि प्रतिबंध की राजनीति की जगह प्रतिबंध हटाने की तरफ ध्यान देने की ज़रूरत है।

7. महिलाओं का शोषण –

सैन्य कार्यवाहियों का एक बेहद चौंका देने वाला और घातक पहलू था इन कार्यवाहियों के दौरान महिला सुरक्षाकर्मियों की पूरी तरह से गैरमौजूदगी। ऑपरेशन एनाकोंडा के तहत जब सुरक्षा बल एक माह तक सारंडा के गाँवों में रहे तो रात को पुरुषों को बंद कर दिया जाता था और महिलाएं गाँव में रहने पर बाध्य होती थीं। इन परिस्थितियों में महिलाओं के शोषण की वारदातों की घटनाओं का अंदाज़ा लगाना मुश्किल नहीं है।

निष्कर्ष

ऊपर दिए हुए विवरण से झारखंड में दमन में तेज़ी आने के संकेत देखे जा सकते हैं। तीन वर्ष पहले शुरू किया गया ऑपरेशन ग्रीन हंट, खनिज संपदा वाले आदिवासी बहुल इलाकों में जारी है। राज्य यह अभियान माओवाद से निपटने नाम पर चला रहा है परन्तु यह स्पष्ट है कि इस सैन्यीकरण और सैन्यीकृत विकास की असली मंशा वह नहीं है जो देश वासियों को बताई जा रही है।

सारंडा एशिया का सबसे बड़ा लोह अयस्क भंडार का क्षेत्र है। अतः आर्थिक तौर पर बेहद महत्वपूर्ण यह क्षेत्र आज राजनीतिक और सामरिक महत्व भी ग्रहण कर चुका है। दुनिया भर के पूंजीपतियों की नज़र सारंडा पर टिकी हैं। बड़े उद्योगपति खनन के लिए यहाँ ज़्यादा से ज़्यादा बड़ा क्षेत्र हथियाने की कोशिश में हैं। सरकार जिस तरह अपने ही कानूनों को ताक पर रख कर खनन कंपनियों को ज़मीन लीज पर देती जा रही है, वह सरकार और कंपनियों के बीच मुनाफे की बंदरबांट का खुला प्रमाण है। झारखंड में सरकारी विकास नीतियों का विरोध विभिन्न संगठनों द्वारा अपनी अपनी तरह से जारी है और यह विरोध बहुत व्यापक है। झारखण्ड में राज्य का सैन्यकरण तेज़ी से बढ़ रहा है। तीन वर्ष पहले खास कर देश के खनिज सम्पदा वाले आदिवासी-बहुल इलाकों में शुरू किये गये ऑपरेशन ग्रीनहंट के अंतर्गत यहाँ भी बर्बर सैन्य अभियान चलाये जा रहे हैं। ऑपरेशन ऑक्टोपस, ऑपरेशन एनाकोंडा नाम से चलाये जाने वाले फौजी अभियान ऑपरेशन ग्रीनहंट नाम की ही कड़ियाँ हैं। ये अभियान सरकार का वह सोचा-समझा फौजी तरीका हैं, जिससे कि जल-जंगल-ज़मीन पर निर्भर आदिवासियों और उनके संगठनों को बाहर से आने वाली बड़ी-बड़ी कंपनियों की इस घुसपैठ और प्राकृतिक संसाधनों की लूट और दोहन का विरोध करने से रोका जा सके। सैन्य अभियान केवल दमन ही नहीं करते बल्कि उनका मकसद यह भी होता है कि लोग आतंकित होकर प्रतिरोध का रास्ता छोड़ दें और सत्ता वर्ग की शर्तों को मानने पर मज़बूर हो जाएं।

यह सही है कि सैन्य बलों के आने से माओवादियों की गतिविधियों पर असर पड़ा होगा और व्यापक प्रतिरोध भी कमज़ोर पड़ा है। साथ ही सैन्य अभियानों से लोगों को न सिर्फ मानसिक तनाव से गुज़रना पड़ रहा है, बल्कि सामाजिक और आर्थिक तौर पर भी उनका जीवन तहस-नहस हो गया है। इन सब कारणों से यहाँ के आदिवासी आज बहुत ही नाज़ुक स्थिति से गुजर रहे हैं। ऑपरेशन ऐनाकोंडा इसका एक उदाहरण है।

ऐसे में सरकार ने ऑपरेशन ऐनाकोंडा के ठीक बाद 'सारंडा एक्शन प्लान' (जिसे बाद में बदल कर 'सारंडा विकास योजना' कहा गया) घोषित किया। सरकारी अफसरों ने इसे विश्व बैंक के विशेषज्ञों के निर्देशों से बनाया है, जिनके साझे दल ने अक्टूबर 2011 में सारंडा क्षेत्र का दौरा किया था। इस प्लान में अल्पावधि और दीर्घकालिक विकास उपायों को रखा गया है। तात्कालिक उपायों में सौर लैम्प, साइकिल, रेडियो का आवंटन, बी. पी.एल. सूची में छूट गये लोगों के नाम जोड़ना, ज़मीन के अधिकार के पट्टे, नरेगा के तहत काम, मकान एवं सड़क निर्माण, पानी, स्वास्थ्य सेवाएं, आदि 6 महीने में उपलब्ध कराना शामिल हैं। प्लान के मुताबिक इस क्षेत्र में बसे सभी 7,000 परिवारों को यह सामग्री बांटी जानी थी, हमें पता चला कि गाँव में चंद लोगों में बांटकर महज खानापूर्ति ही की गयी। नरेगा के तहत कोई खास गतिविधि नहीं दिखायी दी और न ही लोगों में इसकी कोई विशेष चर्चा थी। ज़मीन के अधिकार के पट्टे दिए

जाने का तो सवाल ही पैदा नहीं होता।

'सारंडा एक्शन प्लान' खुद इस बात की पुष्टि करता है कि इस क्षेत्र में कम से कम 12 खनन उद्योग चल रहे हैं। आने वाले कुछ महीनों में कई और उद्योगपतियों को खनन के ठेके मिलने वाले हैं। अब अगर इन सभी पक्षों को जोड़कर एक तस्वीर बनायी जाये तो असलियत का अंदाज़ा लगाया जा सकता है। झारखण्ड राज्य में सरकार 'विकास' की योजना तैयार करती है। विकास की जो परिभाषा राजसत्ता प्रस्तुत करती है उसमें लोगों का विस्थापन और जीविका के साधनों का हनन निहित है। फिर कहा जाता है कि नक्सल-प्रभावित क्षेत्रों में विकास नहीं हो पाया है। माओवादी विकास की राह के रोड़े हैं। जबकि इस बात पर पर्दा डाला जाता है कि पिछले 6 दशकों में आम लोगों की ज़रूरतों के हिसाब से विकास के नाम पर इन क्षेत्रों में कुछ भी नहीं हुआ था। अब अचानक इस तथाकथित विकास की दुहाई देकर, सैन्य अभियान चलाना इस बात की तरफ संकेत करता है कि यह सब असल में पूंजी के फायदे के लिए किया जा रहा है। और बड़े-बड़े पूंजीपतियों को खनन और ठेकेदारों को ठेके दिया जाना ही इसका मुख्य लक्ष्य है।

केन्द्र और राज्य सरकार, दोनों के सुरक्षा बलों में बीते दिनों में कई गुना विस्तार हुआ है। सीडीआरओ की टीम ने अपनी जाँच के दौरान पाया कि आधुनिक हथियारों से लैस अर्द्धसैनिक बलों के कैंप ज़्यादातर स्कूलों और कॉलेजों में ही जगह घेरे बैठे हैं। इनके अलावा जगह-जगह अब अगल से बड़े-बड़े स्थायी कैम्पों का निर्माण भी होता दिखायी देता है। हमें पता चला कि सीआरपीएफ ने यहाँ के स्थानीय पुलिस बल के हाथों से उनके अधिकार छीनना शुरू कर दिया है। बदले समीकरणों का अंदाजा तथ्य संकलन के दौरान इस खुलासे से भी हुआ कि ट्रैफिक पुलिस के काम को कुछ जगह सीआरपीएफ ने अपने हाथों में ले लिया है। स्थानीय पुलिस की भूमिका क्रमशः नगण्य होती जाने का खतरा यहाँ वास्तविक है। हज़ारों की तादाद में झारखंड सशस्त्र पुलिस, झारखण्ड जैग्वार, सीआरपीएफ, कमांडो बटालियन फॉर रेजोल्यूट एक्शन (कोबरा) आदि बलों की तैनाती और 'काउंटर इंमर्जेन्सी एवं जंगल युद्ध कौशल प्रशिक्षण स्कूल' की स्थापना ने झारखण्ड को देशव्यापी 'ऑपरेशन ग्रीन हंट' के नक़्शे पर लक्षित प्रमुख राज्यों की अगली कतार में ला खड़ा किया है।

जाँच दल की मांगें

1. ऑपरेशन ग्रीन हंट को तत्काल रोका जाये।
2. केन्द्रीय सैनिक और अर्द्ध-सैनिक बलों को इन इलाकों से फ़ौरन हटाया जाए।
3. छोटा नागपुर टैनैन्सी एक्ट में कोई संशोधन न किया जाये।
4. वनों पर आधारित गाँववासियों को व्यक्तिगत और सामूहिक अधिकार प्रदान करने वाले वन अधिकार अधिनियम को लागू किया जाए।
5. सार्वजनिक निगमों और कॉपोर्रेट कंपनियों द्वारा लागू की जा रही विभिन्न परियोजनाओं के विरोध में जनता की ओर से उठ रही आवाज़ के मद्देनज़र इन पर पुनर्विचार किया जाये।
6. खनिज संपदा के दोहन और 'सारंडा डेवलपमेंट प्लान' के नाम पर 'पेसा' और पांचवीं अनुसूची से मिले आदिवासियों के अधिकारों को छीनना बंद किया जाए।
7. निजी खनन पर रोक लगायी जाये।
8. जेलों में बंद झारखंड वासियों को तुरंत रिहा किया जाये और उन पर लगे फर्जी मुकदमों को वापस लिया जाये।
9. सैन्य बलों द्वारा पीड़ित व्यक्तियों को न्याय दिया जाये और उत्पीड़न के लिए पुलिस और अर्द्ध-सैनिक बलों के दोषी अधिकारियों को सजा दी जाये।
10. क्रांतिकारी किसान समिति पर से प्रतिबंध हटाया जाए।

जिंदल, मित्तल, टाटा के भगवान!
झारखंडी-झारखंडी, मजदूरों किसान.....
जिंदल, मित्तल, टाटा के भगवा!

अर्जुन मुंडा-बड़ा गुंडा, पूंजीपति के दलाल.....
विकास नामे---विकास नामे, झारखंड के लूटेला,
जिंदल, मित्तल, टाटा के भगवान!

मिट्टी-पत्थर हवा-पानी सबके सब सोना हमार.....
गरीब जनता---गरीब जनता आँसू पी के रहे,
जिंदल, मित्तल, टाटा के भगवान!

झारखंड जनता है बेहाल, टाटा-बिरला मालोमाल.....
गरीब जनता---गरीब जनता करा है पलायन,
जिंदल, मित्तल, टाटा के भगवान!

शासन करे, जुल्म करे, कह देश के विकास.....
जंगल-ज़मीन से करे बेदखल,
जिंदल, मित्तल, टाटा के भगवान!

बड़े दिन से देखली हम सरकार के विकास.
सही विकास, सही विकास.... खातिर कदम बढ़ा
जिंदल, मित्तल, टाटा के भगवान!

कॉरडिनेशन ऑफ़ डैमोक्रैटिक राइट्स ऑरगेनाइज़ेशनस (सीडीआरओ) का परिचय

कॉरडिनेशन ऑफ़ डैमोक्रैटिक राइट्स ऑरगेनाइज़ेशनस (सीडीआरओ) का गठन अगस्त 2007 में हुआ था। इसमें भारत के 20 से ज़्यादा शहरी जनवादी अधिकार संगठन शामिल हैं। भरत में जनआंदोलनों पर राजसत्ता द्वारा हिंसात्मक दमन और जनवादी अधिकारों के लिए संघर्षरत कार्यकर्ताओं की बड़ी तादाद में गिरफ्तारियों के संदर्भ में सीडीआरओ का गठन हुआ। अपनी पहली बैठक में ही सीडीआरओ ने यह निर्णय लिया कि संगठित होना और संघर्ष करना जनता का बुनियादी जनवादी अधिकार है, कि जनता के जनवादी संघर्षों पर राजसत्ता के सभी प्रकार के दमन के खिलाफ एकजुट होकर खड़ा होना ज़रूरी है, कि किसी भी जनवादी अधिकार संगठन या उसके सदस्यों पर राजसत्ता द्वारा हमले की घटना होने पर उसके साथ एकजुट होकर कार्यवाही द्वारा सहयोग देना होगा।

इस तरह विभिन्न प्रकार के अभियानों के लिए कुछ मुद्दे उभर कर आए। जैसे निरंकुश कानूनों को वापस लिए जाने की मांग करना, देश के विभिन्न जेलों में बंद राजनैतिक बंदियों की रिहायी की मांग करना, न्यायिक प्रक्रिया से बाहर जाकर राजसत्ता के द्वारा खड़े किए गए और इस्तेमाल किए जा रहे हथियार बंद गिरोहों पर रोक लगाए जाने की मांग करना, मौत की सज़ा को खतम करने की मांग करना और पुलिस अत्याचार के एक रूप के तौर पर नारको और ऐसे अन्य टैस्टों का पर्दाफाश करना आदि।

सीडीआरओ के घटक संगठन हैं –

ऐसोसिएशन फॉर डैमोक्रेटिक राइट्स (एएफडीआर, पंजाब), आंध्र प्रदेश सिविल लिबर्टीज़ कमिटी (एपीसीएलसी), आसनसोल सिविल राइट्स ऑरगेनाइज़ेशन (पश्चिम बंगाल), ऐसोसिएशन फॉर प्रोटेक्शन ऑफ डैमोक्रैटिक राइट्स (एपीडीआर, पश्चिम बंगाल), बंदी मुक्ति कमिटी (पश्चिम बंगाल), कमिटी फॉर प्रोटेक्शन ऑफ़ डैमोक्रैटिक राइट्स (एपीडीआर मुंबई), कॉरडिनेशन ऑफ डैमोक्रेटिक राइट्स (सीओएचआर मणीपुर), हयूमन राइट्स फोरम (एचआरएफ, आंध्र प्रदेश), लोकशाही हक संगठना (एलएलएस, महाराष्ट्र), मानव अधिकार संग्राम समिति (मास असाम), नागा पीपल्स मूवमेंट फॉर हयूमन राइट्स (एनपीएमएचआर), ऑरगेनाईजेशन फॉर प्रोटेक्शन ऑफ डैमोक्रेटिक राइट्स (ओपीडीआरए आंध्र प्रदेश), पीपुल्स कमिटी फॉर हयूमन राइट्स (पीसीएचआर, जम्मू कशमीर), पीपुल्स डैमोक्रैटिक फोरम (पीडीएफ कर्नाटक), पीपल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज़ (पीयूसीएल, छत्तीसगढ़), पीपल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज़ (पीयूसीएल, झारखंड), पीपल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज़ (पीयूसीएल, नागपुऱ), पीपल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज़ (पीयूसीएल, राजस्थाऩ), पीपल्स यूनियन फॉर डैमोक्रैटिक राइट्स (पीयूडीआर, दिल्ली), पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल राइट्स (पीयूसीआर, हरियाणा), कैम्पेन फॉर पीस एण्ड डैमोक्रैसी (सीपीडीएम, मणीपुर)

Published by : Coordination of Democratic Rights Organisations (CDRO),
Printed at : Progressive Printers, A-21, Jhilmil Industrial Area, GT Road, Shahdara Delhi-95,
For Copies : Moushumi Basu, A-6/1, Aditi Apartments, Pocket D, Janak Puri, New Delhi-110058, www.pudr.org